

दुखी दुनिया

लेखक:
श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

प्रकाशक,
मार्तंड उपाध्याय, मंत्री
सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

नवम्बर, १६२६ : २०००
दिसम्बर, १६३७ : १०००
जून, १६३६ : २०००
सितंबर, १६४२ : २०००
जनवरी १६४५ : १०००

मूल्य
बारह आना

मुद्रक,
श्री अमरचंद्र जैन
राजहंस प्रेस,
दिल्ली

विषय-सूची

१—'काहेका ताना काहेका बाना' ... १

२—हैट और साड़ी ... ११

३—अंधी लड़की ... १७

४—अभागिनी ! ... २३

५—प्रायश्चित्त ... ४६

६—जगदीश शास्त्रीका सपना ... ६७

७—देवसेना ... ८३

परिचय

यह संग्रह मैंने मूल अंग्रेजीमें पढ़ा है। श्री चक्रवर्ती राजगोपाला-चार्यकी लेखनीमें शक्ति है; क्योंकि उसमें अनुभव और भावना है। ये सब कहानियां हिंदी जनताके सामने रखकर सस्ता-साहित्य-मंडलने उपकार किया है। पाठकोंको यह जान लेना आवश्यक है कि यद्यपि ये हैं तो कहानियां; पर वस्तुतः इनमें वर्णित घटनायें सब सच्ची ही हैं।

मेरठ
२८-१०-२९

मो० क० गांधी

दुखी दुनिया

: १ :

'काहेका ताना काहेका बाना'

पार्थसारथी सुशील उत्साही युवक था। तामिल प्रदेशके एक कोनेमें राजनैतिक झंझटोंसे दूर रहकर खादीका काम करता था। अभी कुंवारा ही था। मां उसके साथ रहती थी। कालीयूर ग्राम और उसके इधर-उधर के नगरोंमें वह ग़रीब मनुष्योंसे और स्त्रियोंसे---विशेषतः स्त्रियोंसे— गांधीजीके बारेमें बातें किया करता। उसने उन्हें चरखेका संदेश सुनाया और समझाया कि इसकी सहायतसे वे अपना गुज़र कर सकती हैं। उनके उजड़े जीवन-वनमें आशा-लता लहलहाने लगी। धरन-बड़ेरों पर पड़े पुराने चरखे उतरे और कालीयूर तथा उसके आस-पासके गांव चरखोंके मधुर संगीतसे गूंजने लगे। गांवका बढ़ई नये चरखे भी बनाने लगा। बढ़ई किसानोंकी स्त्रियोंमें फेरी लगाता, पूछता, 'किसीको नया चरखा बनवाना है? पुरानेकी मरम्मत करवानी है?' यह पूछकर 'हां' में जवाब पानेपर उसका मुरझाया चेहरा एकदम खिल उठता। स्त्रियां सिरपर ताड़के पत्तों-की सुंदर टोकरियोंमें सूत रक्खे खेतोंके बीचसे कालीयरके 'गांधी-भंडार'-की ओर जाती दिखाई देतीं। वे भारतकी दरिद्रताकी मूर्त्ति-सी लगती थीं। बदन पर पूरे कपड़े न थे। आधा शरीर नंगा ही था और कई तो कमर-में एक कपड़ा लपेटकर जैसे-तैसे अपनी लाज बचा रही थीं।

स्त्रियोंकी भीड़-की-भीड़ कालीयूर 'गांधी भंडार' पर इकट्ठी होती थी। कोई अपना सूत उलट-पुलटकर देखती; कोई सूतकी लच्छियोंको साफ़ और चिकना कर रखती; कोई अपनी डलियामें दबा-दबाकर रुई भरती; और कोई अपनी गाढ़ी कमाईके पैसोंको बार-बार संतोषभरी आंखोंसे गिनती। ये स्त्रियां घरके काम-काजसे समय बचाकर कताईका काम करतीं।

पुरुषोंको अपने गार्हस्थ्य-जीवनमें परिवर्तन देखकर आनंद होता था। उनकी स्त्रियां जो थोडे-बहुत पैसे कालीयूरके 'गांधी-भंडार'से लातीं, उनसे वे बड़े खुश होते, क्योंकि पैठके दिन ये पैसे बड़े काम आते।

* * * *

तीन वर्षसे लगातार फ़सल ख़राब हो रही थी। गांववाले सिर धुनते। बहुत सोचते; पर कोई रास्ता नज़र नहीं आता था। बहुतसे किसान निराश होकर फिजी आदि उपनिवेशोंमें जाकर मज़दूरीसे पेट भरनेकी सोचने लगे। आरकाटियोंने आकर अपना अड्डा जमा लिया। इसी समय पार्थसारथीने आकर कालीयूरमें अपना खादी-केंद्र खोला।

पार्थसारथीने कालेज कैसे छोड़ा, कैसे उस आघातसे दुखी होकर उसके पिताकी मृत्यु होगई, कैसे पार्थसारथीकी माताको दुःख हुआ और फिर उसको कैसे संतोष मिला तथा पार्थसारथी कालीयूर कैसे आया, इत्यादिकी कहानी बड़ी लंबी है।

बूढ़ेने गायें खोलते हुए कहा—"पवाई, मैं जानवरोंकी देख-भाल कर लूंगा। जा, तू सूत कात। शनिवारके दो ही दिन रह गये हैं।" शनिवारको पार्थसारथी इस गांवका कता हुआ सूत लिया करता था।

पवाईने कहा "बहुत अच्छा।" उसके बच्चेकी आंखें उठी थीं और वह रो रहा था। इसलिए पवाईको अनायास घर रहनेका मौका मिल जाने से बड़ी खुशी हुई। वह अपने झोंपड़ेके सामने सहनमें चरखा रख अपना पीढ़ा और पूनियोंकी डलिया ठीक-ठाककर बैठ गई।

अड़ोस-पड़ोसके किसानोंके यहां भी यही होता था। पुरुष खेतों और घरोंमें अधिक काम करने लगे। वर्षों बाद बूढ़ियोंको युवतियोंसे होड़ करने और उन्हें हरानेका मौक मिला था। जब युवतियां मोटा-झोटा सूत कातकर लातीं तब बूढ़ियां ठहाके लगातीं और उनका खूब मज़ाक उड़ातीं। बूढ़ियोंकी आंखोंकी ज्योति कम हो गई थी, हाथ कांपते थे पर तब भी वे सहजमें सुंदर सूत निकालती थीं। युवतियोंको यह नई चीज़ सीखनेमें काफ़ी दिक्कत होती थी; पर कुछ ही दिनोंमें सबको अच्छा सूत कातना

आ गया और युवतियोंके सूतमें दिन-दिन उन्नति होते देख पार्थसारथीका हृदय आनंदित होने लगा।

"युवतियोंको सीखनेमें कुछ भी समय नहीं लगता।"—उसने अपने प्रिय मित्र और साथी कार्यकर्त्ता सुब्रह्मण्यम्से कहा।

सुब्रह्मण्यम् दीन बूढ़ियों पर दयालु था। छोकरियोंके खराब सूत पर कड़ी नज़र रखता और उनको कम मज़दूरी देता था।

बोला—"जुलाहे ऐसा सूत नहीं ले सकते। इस सूतका टाट-सा कपड़ा बनेगा।"

"कुछ दिनोंमें सब ठीक कातने लगेंगी। ज़रा, इसे देखो।"—पार्थ-सारथीने हालकी जांची हुई लच्छी फेंककर कहा।

ज्यों-ज्यों दिन गुज़रने लगे, सूत अधिकाधिक बढ़ता गया। भंडारकी मिट्टीसे पुती सफ़ेद दीवारके सहारे हाथके कते सफ़ेद सूतका ढेर दिन-दिन बढ़ता देख पार्थसारथी और उसके साथी कार्यकर्ताओंका छोटा-सा झुंड बहुत खुश होता।

कालीयूरमें सूतकी पैदावार बढ़ती गई। इस साल भी वर्षा नहीं हुई। नदी-नालों और यहांतक कि कुंओंका पानी सूख गया। किसान हताश होगये। उन्हें कोई उपाय नहीं सूझता। पर स्त्रियोंके पास सोचने या बहस करनेका समय नहीं था। वे दिन-भर कातती थीं। चांदनी रातें भी चरखे पर बितातीं। पार्थसारथीको छोटेसे भंडारका काम संभालना मुश्किल होगया। उसके रुईके बोरे ऐसे खत्म होने लगे जैसे सूर्यके सामनेसे अंध-कार। कते सूतके बंडलके बंडल आने लगे। रखनेके लिए जगहकी कमी पड़ने लगी। पार्थसारथीके मित्र, गांवके मुखियाने पार्थसारथीको सूत जमा करनेको एक खाली झोंपड़ा दिलवा दिया। परंतु पार्थसारथीके पास जितना अधिक सूत आरहा था, उसे जल्दीसे बुनवाना अथवा तैयार माल बेच डालना मुश्किल होगया। उत्तर प्रदेशमें रहने वाले अपने पुराने मित्रोंको उसने लिखा कि 'भाई, मेरी सहायता करो।' इनमेंसे कुछने उसकी टेर सुनी और अपने-अपने मित्रोंको लिखा। अंतमें बंबईके खादी-

राजा जेराजानीसे तय पाया कि वह कालीयूरका माल बराबर लेते रहेंगे। अब चारों ओरके गांवोंमें काम फैल गया, किसानोंके झोंपड़े जीवन-ज्योतिसे जगमगा उठे। मुर्झाया कालीयूर मुसकुरा उठा। दूर-दूरके गांवोंसे झुंड-के झुंड दर्शक कालीयूरमें होनेवाले अचंभे को देखने आने लगे।

एक दिन बंबईके खादी-राजाने पार्थसारथीको लिखा—"आपका कपड़ा अच्छा है; पर वह और भी अच्छा हो सकता है। क्या आप उसमें कुछ तार और नहीं बढ़ा सकते? अगर आप कुछ अधिक तार बढ़ाकर कपड़ा बनावें तो हमें आपका माल बेचनेमें ज्यादा आसानी होगी।" पार्थसारथी पत्र पढ़कर मुस्कराया। उसने सोचा कि जेराजानीके पास शायद माल ज्यादा जमा हो गया है। इसीलिए वह अब कपड़ेके गुण-दोष ढूंढ़ने लगे हैं।

पार्थसरथीने अपने जुलाहोंसे कहा और उन्हें ठोस कपड़ा बुननेपर राजी किया। जेराजानीने लिखा—'कपड़ेमें जरूर उन्नति हुई है।' और उन्होंने पार्थसारथीके प्रयत्नकी तारीफ भी की।

परंतु कुछ दिन बाद एक दूसरा पत्र आया—

"आपका सूत तो जरूर बारीक होता है। हमारे ग्राहकोंको उससे बहुत कुछ संतोष भी हुआ है। परंतु हम देखते हैं कि सब थान एक-सा नहीं होते। अपनी बुनाई पर आपको अधिक कड़ी देख-रेख रखनी चाहिए।" स्पष्ट था कि बंबईके बाजारमें फिर सुस्ती आगई थी।

सुब्रह्मण्यम्‌ने अधीर होकर कहा, "ऐसे काम नहीं चलेगा। यह आदमी हम लोगोंसे बेजा फायदा उठाना चाहता है।"

पार्थसारथीने कहा—"नहीं, उन्हें अपने ग्राहकोंको संतुष्ट रखना ही चाहिए, नहीं तो वह अपना माल कैसे बेच सकते हैं और कैसे हमारी सहायता कर सकते हैं?"

पार्थसारथी जुलाहों और कत्तिनोंपर सख्ती करने लगा। गुरुवारका दिन उसने जुलाहोंका तैयार किया माल लेनेके लिए नियत किया था। अब वह हर बृहस्पतिको हर थानको स्वयं बड़ी मेहनतसे देखने लगा,

जुलाहोंको उनकी त्रुटियां समझाने लगा। एक-दो सप्ताह बाद वह अच्छे मालपर इतना ज़ोर देने लगा कि उसने सबको सूचना दे दी कि अगर माल एक खास हदसे ज्यादा खराब होगा, तो उसके दाम कम कर दिये जायंगे।

जुलाहोंको यह बात अच्छी न लगी। कुछ तो इतने बिगड़े कि अपना हिसाब-किताब साफ करके अपने पुराने मालिकों—मिलके सूतका माल बनवाने वालों—के पास चले गये। परंतु बहुतोंने सोचा कि जिनसे हम एक बार लड़ चुके हैं, उनके पास फिर लौटकर जाना अपमानजनक है। ऐसा करनेसे आर्थिक हानि होनेकी भी संभावना है।

पार्थसारथी अपना काम चलाता रहा। उसने एक पत्र बंबई लिखकर पूछा—'क्या हमारे मालसे अब आपको सन्तोष है?' इस नये ढंगसे उसने बंबईवालोंको अपनी याद दिलाई; क्योंकि बंबईसे पहलेकी तरह जल्दी-जल्दी मांग आनी बंद होगई थी।

कुछ दिन ठहरकर जवाब आया—"कपड़ा आपका साधारणतया अब अच्छा होता है—हमें प्रसन्नता है कि आप कपड़ेकी बुनाईपर अधिक ध्यान देते हैं; परंतु अब भी बहुत-कुछ कमी है। हमारे ग्राहक मिलका-सा महीन कपड़ा चाहते हैं और हम उन्हें संतोष देनेको बाध्य हैं। हमें आपके काममें सहायता करनेमें बड़ी प्रसन्नता होती है; परंतु आपको ध्यान रखना चाहिये कि जबतक आपका माल बाजारमें बिकने काबिल न हो, तबतक हम आपकी सहायता नहीं कर सकते।"

बेचारा पार्थसारथी जैसे बना, काम चलाता रहा। जब जुलाहे कपड़ा बुनकर लाते, वह ऊपरी क्रोधसे काम लेता। उसका कलेजा मुंहको आता; परंतु उसे कठोरतासे काम लेना पड़ता था।

"क्यों यह क्या है?" वह थान खोलकर कहता, "यह किनारे पर सफाई क्यों नहीं है? यह यहाँ पर मोटा-पतला धागा क्यों है?"

"अबकी बार अच्छा लावेंगे"—गांवके जुलाहोंका हमेशा यही

छोटा-सा नम्र उत्तर होता। समालोचनाका उन पर अधिक असर नहीं होता था।

"यों काम नहीं चलेगा। इस थानकी मजदूरीमेंसे मैं चार आने काट लूंगा।"

"राम-राम! ऐसा न कीजिये साहब! मेरा पेट मत काटिये!" जुलाहा रोने लगा। फिर आध घंटेतक एक तरफ खुशामद-दरामद और दूसरी ओर दिखावटी कठोरतामें द्वंद्व-युद्ध होता रहा। बहुत समय बरबाद हुआ। बंबईके ग्राहकोंके लिए, जो मिलके कपड़ेकी तरह बारीक खादी मांगते थे, अच्छा माल तैयार करवानेका और कोई मार्ग ही नहीं था।

"भाई, इस प्रकार काम नहीं चल सकता। हम लोगोंको अपना माल यहींके बाजारमें बेच देना चाहिए।" पार्थसारथीने एक दिन सुब्रह्मण्यम्-से कहा।

सुब्रह्मण्यम् मुसकराकर बोला—"ये लोग इस जन्ममें तो क्या, अगले जन्ममें भी खादीकी एक धोतीके लिए एक रुपया छः आना न देंगे; क्यों-कि उतने ही दाममें उन्हें मिलकी बुनी हुई दो सुंदर धोतियां मिल जाती हैं।"

"यह ठीक है; परंतु फिर भी हम लोगोंको प्रयत्न तो करना ही चाहिए। अड़ोस-पड़ोसमें जहां-जहां हाट लगती है, वहां चलना चाहिए। बंबईके शौकीन लोगोंकी गुलामी हम नहीं कर सकते। इन्हें खुश करना असंभव है।"—पार्थसारथी ने कहा।

* * *

"कैसी भद्दी बिनाई है? यह मच्छरदानी है या धोती? मैं इसके कुछ भी दाम नहीं दे सकता। ले जाओ, इसे तुम्हीं अपने किसी काम-में लेना।"

"राम-राम! मैं इसे अपने किस काममें ला सकता हूं।"

"सुब्रह्मण्यम्! इस आदमीसे कह दो, कि हम ऐसा माल नहीं ले

सकते। अपने कपड़ेको उठाकर घर ले जाय, कहीं और बेच डाले अथवा जो चाहे सो करे, मुझे और लोगोंका माल देखना है। ज्यादा बातचीत करनेका समय नहीं है।"

पलनिमुत्तु जुलाहा, जिसका थान पार्थसारथीने लेनेसे इंकार कर दिया था, स्तब्ध खड़ा रहा। उसने देखा कि अबकी बार पार्थसारथी सचमुच क्रोधमें है। पार्थसारथीने पहले कई बार प्रयत्न किया था; पर उसकी धमकियां और डांट गरीब जुलाहोंके हृदयमें भय पैदा नहीं करती थीं। दयाको हृदयमें छिपाकर रखना बड़ा मुश्किल था। पार्थसारथीका शब्द और स्वर कितना ही कठोर हो, पर दरिद्रताकी तीव्र दृष्टि कठोरताके पीछे छिपी दयाको देख ही लेती थी। परंतु अबको बार पार्थसारथी सचमुच ही कठोर होगया था।

"क्यों खड़े हो? मैं माफ नहीं कर सकता। कपड़ा बहुत भद्दा है, भाग जाओ।" पार्थसारथीने गुस्सेसे कपड़ा फेंक दिया और दूसरे मनुष्यका माल देखने लगा।

"हुजूर..."पलनिमुत्तु बोलने लगा।

"नहीं"—पार्थसारथीने झिड़ककर कहा।

"मेरा लड़का इसी सप्ताह मर गया।"—जुलाहा बोला। पार्थसारथीने मुंह उठाकर जुलाहेकी ओर देखा। उसका मुंह लज्जासे झुक गया।

"और उसकी मां बीमार है!"—जुलाहा कहता रहा। "भगवान् जाने उसके भाग्यमें क्या लिखा है। मेरे सरपर सनीचर सवार है। मेरा मन बड़ा दुःखी था। पापी पेटके लिए करघेपर बैठना पड़ा। हाथ करघेपर थे; पर मन था कहीं और। अबकी बार माफ करदो भैया! आजतक कभी आपको मेरे मालसे असंतोष नहीं हुआ है।"

"इन सब बातोंको सुनकर मैं क्या करूं?"—पार्थसारथीने कहा। परंतु पहिलेसे अधिक नम्र स्वरमें बोला—"ऐसे मालको लेकर मैं क्या करूंगा? तुम्हारी ये दलीलें तो मैं ग्राहकोंको नहीं सुना सकता।"

"अबकी बार माफ कर दो, भैया—" पलनिने गिड़गिड़ाकर कहा।

"नहीं, मैं इस थानको नहीं ले सकता। अपने घर जाओ।" पार्थसारथीने दृढ़तासे कहा।

"मैं मर जाऊंगा, भैया। मेरे बच्चे हफ्तेभर भूखों मरेंगे।" गरीब जुलाहा रोने लगा और पेटके बल जमीनपर लेटकर उसने अपना सिर पार्थसारथीके पैरोंपर रख दिया।

"सुब्रह्मण्यम्, दे दो इस आदमीको दाम। परंतु अब आगे मैं ऐसे बहाने हर्गिज नहीं सुनूंगा। तुम्हारा लड़का कितना बड़ा था?"

"सत्रह वर्षका पट्ठा था, भैया। बड़ी मुश्किलसे पाल-पोसकर बड़ा किया था। सोचा था बुढ़ापेमें मदद करेगा। परंतु जब वह करघेपर बैठकर मुझे सहायता देने योग्य हुआ, तभी भगवान्‌ने उसे उठा लिया।"

शेष कार्य शांतिसे हुआ। पार्थसारथीने और किसी जुलाहेके थानमें मीन-मेख नहीं निकाली। उसे बड़ा दुःख होरहा था, जैसे कोई बड़ी गलती कर बैठनेपर मनुष्यको पश्चात्ताप होता है, परंतु जिसकी याद ही हमें असह्य होती है। खाना खाते समय भी उसके मनकी यही दशा रही। मांने चुपचाप खाना परोस दिया और वह खाकर उठ गया।

रातको भी उसे बहुत कम नींद आई। दूसरे दिन प्रातःकाल ही वह उठा और बिस्तरेपर ही बैठे-बैठे चुपचाप प्रार्थना करके उसने अपना मन शांत किया। तब उसके चेहरे पर आनंद और उत्साहकी आभा चमक उठी। उसकी माता और सुब्रह्मण्यम् यह देखकर बड़े प्रसन्न हुए।

"यह अच्छे कपड़ेकी मांग बड़ी वाहियात है—" पार्थसारथीने कहा। "हाथका बुना आखिरकार हाथ ही का बना तो है। उसमें मानव-जीवनके दुःख और सुखकी जो कहानी लिखी है, उसे हम अलग नहीं कर सकते। किसी दिन जुलाहा प्रसन्न है, उसके हाथ, पांव, आंखें सब ठीक-ठीक काम करते हैं, दूसरे दिन उसे दुःख है, तीसरे दिन उसे कोई दैवी-प्रकोप आ घेरता है। पर काम छोड़नेकी उसकी परिस्थिति नहीं है। कभी फ़ुरसत रहती है, कभी रहता है बड़ी जल्दीमें। आखिर आदमी मशीन तो है नहीं कि हमेशा एक-सा हाथ-पांव चलाता रहे।

सुब्रह्मण्यम् कारीगरीके दांव-पेचोंसे हमेशा ही भरा रहता था। उसने पार्थसारथीके कथनका अभिप्राय अपने ढंगसे निकाला। वह बोला—"बिलकुल ठीक है। कितना ही प्रयत्न किया जाय, कपड़ा कभी एक-सा नहीं हो सकता। कहीं ज़रा-सा पतला सूत आगया तो मालूम होता है कि कपड़ा झिर-झिरा है। इसका कुछ इलाज है ही नहीं। हमेशा जुलाहों ही की गलती नहीं होती।"

"हां, हम लोगोंको इन बंबईवालोंसे कह देना चाहिए कि उनको करघों और चरखोंसे मिलके-से कपड़ेकी आशा नहीं रखनी चाहिए। करघे आखिर करघे हैं और चरखे आखिर चरखे।"

"हां" सुब्रह्मण्यम् बोला, "और उनको यह भी समझ लेना चाहिए कि गांधीजीने कालीयूरमें कोई मिलें नहीं खड़ी की हैं, जहांसे वे बिना पूंजी लगाये मजेसे कपड़ा मंगा सकें।

"ठीक है। गांधीजीने एक घरेलू उद्योग खड़ा किया है और उससे सैकड़ों-हजारों स्त्री-पुरुषोंको पेटकी ज्वालामें भस्म होनेसे बचाया है। फैशन और शौकको चाहिए कि पतले और बढ़िया कपड़ोंमें सौंदर्य न देखकर गरीबोंको रोटी देनेमें सौंदर्य देखे।"

इस प्रकार हाथके कते-बुने कपड़ेके मानस-शास्त्रपर बातें हो रही थीं कि इतनेमें एक बुढ़िया आई और पार्थसारथीके पैरोंपर पैसे फेंक सिसकियां लेती एकदम फूट-फूट कर रोने लगी।

"क्यों, क्या है?" पार्थसारथी ने मुस्कराकर पूछा। वह जानता था कि यह कातनेवाली प्रायः जरा-जरासी बातपर रो उठती है।

"अपने पैसे वापिस ले लीजिए। मैंने अपनी एकमात्र औलाद, अपनी विधवा पुत्री—अपने सर्वस्व—को चितापर रख दिया। अब मैं अभागी बूढ़ी जीकर क्या करूंगी?" बुढ़िया रोने लगी।

"लेकिन बात क्या है?" पार्थसारथीने पूछा।

"मुझे मरने दीजिए। अपने पैसे वापिस ले लीजिए; मुझे आपके पैसे नहीं चाहिएं।"

"क्यों बेवकूफ़ीकी बात करती हो ? जरा रोना बंद करके मुझे बताओ कि आखिर तुम्हें क्या चाहिए ?" पार्थसारथीने प्रेमपूर्वक पूछा ।

"रामकृष्णय्या तो कहते हैं कि अबकी बार मेरा सूत मोटा है, एकसा नहीं है : उन्होंने मेरी मजदूरीमेंसे एक आना काट लिया, गांव-भरमें मैं सबसे अच्छा सूत कातती हूं । मैं हमेशा अपनी लड़कीसे भी कहती हूं कि उसे औरोंकी तरह मोटा सूत नहीं कातना चाहिए । ध्यान देकर अच्छा सूत कातना चाहिए । हमारा सूत हमेशा सोनेके तारकी तरह होता था । जिन्हें सूतकी परख है, उनसे पूछ लीजिए ।" यह कहकर वह फिर फूट-फूट कर रोने लगी । सिसकियोंके वेगने उसके शब्द-प्रवाहको रोक दिया ।

सुब्रह्मण्यमने बुढ़ियाको शांत करनेकी चेष्टा की और कहा कि अच्छे सूतके लिए हमेशा अच्छी मजदूरी मिलती है, बुरे सूतके कम पैसे मिलने ही चाहिएं । मोटे सूतसे जुलाहे अच्छा कपड़ा नहीं बुन सकते । कल ही वे लोग झींक रहे थे ।

"अपने पैसे वापिस ले लीजिए । मेरी लड़की—मेरे बुढ़ापेका सहारा—जो इस कठोर दुनियामें मुझ अभागीका साथ देती थी, परसों एक दिनके बुखारसे चल बसी । भगवान्ने मुझे नहीं बुलाया और न बिना खाये-पीये जीवित रहनेका मार्ग ही दिखाया । पापी पेटकी आग बुझानेके लिए कुछ सहारा हो जायगा, इसी विचारसे मैं रोती-रोती भी कातती रही कि किसी-न-किसी तरह हफ्ते भरका सूत पूरा हो जाय । मेरे दुर्भाग्य के कारण ध्यान बट जानेसे सूत कुछ मोटा होगया ।

"क्या एक अभागी बुढ़ियाके प्रति तुम्हारा यह व्यवहार ठीक है ? भला हो उस पादरीका जिससे उधार लेकर मैंने काम चलाया । उसने मेरी उस समय सहायता की जबकि मेरी लड़कीकी लाश घरमें पड़ी थी और मेरी हंडियामें एक दाना भी नहीं था ।"

"पिछली पैठपर मैंने सब पैसोंका बाजरा खरीद लिया था । एक पख-वाड़ेमें मुझे ईसाईका एक रुपया वापस दे देना है । तुम मुझे उस सूतके लिए जो मैंने बड़ी मुश्किलसे रो-रोकर काता है, एक आना कम देते हो !

अगले सप्ताह तुम दो आना काट लोगे ! मैं अपना कर्ज़ा कैसे चुकाऊंगी और कहांसे पेट भरनेको सत्तू पाऊंगी। मुझे मरने दो।"

"सुब्रह्मण्यम् !" पार्थसारथीने कहा—"जाओ रामकृष्णय्यासे कह दो कि इस स्त्रीको पूरे दाम दे दे। इसको कुछ पेशगी भी क्यों न दे दे ? सुतम्मा जा, तुझे पूरे दाम मिल जायेंगे, रो मत।"

बुढ़िया पैसे उठाकर चल दी।

"ये समस्यायें कैसे हल होंगी ?" पार्थसारथी अर्ध-स्वरमें सोचता हुआ अपनी मांको पानी खींच देनेके लिए कुएं की तरफ बढ़ा।

"हे भगवान कैसी दशा है ?" पार्थसारथीकी मां बोली। वह हाथमें घड़ा लिये कुएं पर खड़ी हुई सुतम्माकी सारी बातें सुन रही थी।

२

हैट और साड़ी

"डार्लिंग ! चलो, जल्दी करो। दो बजेके भीतर-भीतर तैयार हो जाओ, भोज शामके पांच बजे हैं और हमें ५२ मीलका सफर तै करना है।"

मिस्टर कौशिक आई० सी० एस० पर्वतीपुर डिविजनके युवक असिस्टेंट कलेक्टर थे। डिस्ट्रिक्ट कलेक्टर मिस्टर मोबरली आज एक भोज देने वाले थे। उसमें मिस्टर तथा मिसेज कौशिक भी निमंत्रित थीं।

मि० कौशिकने तो जानबूझकर तमाम हिंदू अंध-विश्वासोंको अपने घरसे बिदा कर दिया था। किंतु उसकी माता एक कट्टर धार्मिक महिला थीं। उन्होंने इस बातपर बड़ा जोर दिया कि उनके पतिका वार्षिक श्राद्ध जरूर होना चाहिए। पर्वतीपुरके ब्राह्मण-पुरोहितोंको एक अच्छा मौका हाथ लगा। विशेषतः जब उन्हें यह मालूम हुआ कि मिस्टर कौशिक श्राद्ध वग़ैरहकी झंझटमें खुद नहीं पड़ेंगे, बल्कि वे अपने स्थानपर किसी ब्राह्मणकी योजना करनेवाले हैं, तब तो उनकी खुशीका कोई ठिकाना नहीं रहा। उन्होंने खूब कड़ी दक्षिणा मांगी और उसपर अड़ गये। मि०

कौशिक जहांसे तब्दील होकर यहां आये थे, वह स्थान दक्षिणाके लिहाजसे इतना मंहगा नहीं था। पर पर्वतीपुर तो कट्टरोंका केंद्र था। यहां जाति-नियमोंके भंग होनेपर कड़ा कर देना पड़ता था। मिस्टर कौशिकको पैसे-वैसेकी कोई परवा नहीं थी। वे तो इस बातपर झुंझला रहे थे कि यह 'श्राद्ध' ठीक उसी दिन आसमानसे क्यों टपक पड़ा, जिस दिन कलेक्टरने उन्हें पहले-पहल अपने यहां भोजके लिए निमंत्रित किया था। उन्होंने ब्राह्मणोंसे डपटकर कह दिया कि "देखो, यह सब जल्दी खतम कर देना, आज दोपहरके बाद मुझे कलेक्टर साहबके यहां एक जरूरी कामसे जाना है।" ब्राह्मणोंका क्या था? देने-लेनेकी बातें तय होते ही ब्राह्मण एकदम उदार बन गये। उन्होंने तमाम आवश्यक बातें छोड़ गाड़ीकी गतिसे अपना काम जल्दी समाप्त करनेका वचन देकर मि० कौशिक को निश्चित कर दिया।

* * *

दो बज चुके थे। पतिका श्राद्ध इतनी जल्दी-जल्दी और लापरवाहीके साथ होते देख वृद्धाको बड़ा दुःख हुआ। पर अपने बहू-बेटेपर उसका असीम प्यार था।

बहूके बाल संवारते-संवारते वह बोली—"बेटी! मैं मर जाऊंगी तब तो गोपालकृष्णन् इतना भी न करेगा।"

मि० कौशिकका असली नाम गोपालकृष्णन् अय्यर था। पर आक्सफोर्ड पहुंचनेपर उन्हें यह बेहद लंबा मालूम होने लगा। इसलिए उन्होंने अपना नाम गोत्रानुसार बना लिया। यह सुधरी हुई अंग्रेजी शैली-से कुछ मिलता-जुलता भी था। तबसे वे मिस्टर कौशिक बन गये।

वृद्धाने अपनी बहूके सिरपर सिंदूरका तिलक लगाया। उसकी वेणी-में ताजे फूलोंकी एक माला गूंथी एक बार उसकी ओर वात्सल्य-भरी नज़रसे देखा कि सब ठीक तो है। जब उसे संतोष होगया, तब कहा—"हां, अब जाओ बेटी।"

"Are you ready darling" (प्रिये! क्या तुम तैयार हो?)—

मि० कौशिक अपने ड्रेसिंग रूमसे चिल्लाये। मिस्टर कौशिक पत्निसे अक्सर अंग्रेजीमें ही बातचीत करते थे; क्योंकि वे बेहूदी हिंदुस्तानी भाषामें अपनी पत्नीको 'डार्लिंग', 'डियर' आदि शब्दोंसे संबोधित नहीं कर सकते थे।

"जी हां, मैं आई" कहकर पूरी तरह सजधज कर मिसेज़ कौशिकने अपने पतिके कमरेमें हंसते हुए प्रवेश किया। वह एक उत्कृष्ट बंगलोरी साड़ी पहिने थीं, जिसका संुदर लाल रंग सोनेके समान उनके कांतिपूर्ण शरीरपर बड़ा भला मालूम देता था।

पतिने देखते ही कहा, "प्रिये! तुम कितनी सुंदर हो!" लज्जासे मिसेज़ कौशिकके कपोल आरक्त हो गए। उसका सौंदर्य और भी खिल उठा।

मोटर-साइकिल पोर्चमें खड़ी ही थी। मि० कौशिकने अंगरेजी प्रथानुसार पत्निको सहारा देकर 'साइडकार' में बैठाया और बोले "गुजराती ढंगसे साड़ी सिरपर ले लो, जिससे बालोंमें धूल न पड़ने पावे।"

स्वयं उन्होंने भी अपने सिरपर हैट जमा ली और रवाना हुए। बाहर जाते समय वह हमेशा हैट पहनते थे।

फिट-फिट-फिट-फिट करते हुए दोनों पति-पत्नी पर्वतीपुर-मंगापटनम्-रोडपर चले। लोकल बोर्डका रास्ता था, कौन ध्यान देता है, कई गढ़े और खाइयां थीं। खैर।

तहसील पिछड़ी हुई थी। लोगोंके लिए मोटर-साइकिल एक असाधारण चीज़ थी। बैलगाड़ियोंको हटानेके लिए आधे मीलसे हार्न बजाना पड़ता, तब कहीं लोग कुछ इधर-उधर होते; और कुछ तो यही विचार करते रह जाते कि किस पटरीपर गाड़ी करनी चाहिए। ज्योंही असिस्टेंट कलेक्टर साहब अपनी पत्नी सहित वहांसे गुजरे त्योंही लोगोंके झुंड-के-झुंड राहपर आकर उनकी ओर आश्चर्य-भरी नजरसे यों देखने लगे मानो वे किसी विचित्र प्राणीको देख रहे हों।

मि० कौशिक कलेक्टरके बंगलेपर पहुंचे तो वे बुरी तरह थके थे। उनके चेहरेकी प्रसन्नता और ताजगी अदृश्य होगई थी। पर मिसेज़ मोन-

रली बड़ी अच्छी महिला थीं। उनकी बोल-चाल और ढंग अत्यंत मनोहर था। और हिंदुस्तानी मेहमानोंसे तो वह बड़ी ही खुश होती थीं।

श्रीमती कौशिकसे वह बड़े प्रेमसे मिलीं। उनकी साड़ी उन्हें बहुत पसंद आई। "कितनी सुंदर! कैसा बढ़िया रेशम है। ये फूल और तुम्हारे ये काले-काले बाल! मेरे भी ऐसे बाल होते तो कितना अच्छा होता! हमारे इन गाउन्सकी बनिस्बत आपकी ये साड़ियां कितनी मनोहर मालूम होती हैं?" इत्यादि-इत्यादि।

सब प्रसन्न होगए।

बड़ा आनंद रहा। कहानीका प्रोग्राम भी था। सबसे एक-एक मजेदार कहानी सुनानेके लिए कहा गया। और कहानी मजेदार हो या न हो, सबको दिल खोलकर हंसना जरूर चाहिए। भोजनमें एक डिप्टी कलेक्टर भी आये थे। युवक थे, सब लोग इनसे खुश थे। कहा जाता था कि वह बड़े चतुर अधिकारी और बड़े कहानी कहनेवाले हैं।

"अब आपकी बारी है मि० साकेतराम, बढ़िया कहानी सुनाइए।" मिसेज़ मोबरलीने कहा।

"मुझे एक कहानी याद तो है पर वह इस समाजमें कहने योग्य नहीं है।" विनोदपूर्वक कटाक्ष करते हुए मि० साकेतराम बोले।

"नहीं, वही कहानी होगी।" मि०कौशिक बोले। हाल ही में अपने कौशलपर वह शाबाशी ले चुके थे।

"तब क्या आप मुझे वचन देते हैं, कि बादमें मुझे दोष नहीं देंगे? पर नहीं, मुझे वह कहानी यहां नहीं सुनानी चाहिए। वह ठीक नहीं रहेगी। मैं आपको दूसरी कहानी सुनाऊंगा।"

"नहीं—नहीं, वही सुनाइए। चीज तो वही सुनेंगे।"—कहकर हर व्यक्ति चिल्लाने लगा।

"खैर, तो लीजिए, सुनिए। कहानी सच्ची है और खूबी यह कि आज-की है।"

"आज ही की? चलिए, तो सुनाइए झटपट।"—सभी बोले।

"थोड़ी चाय लीजियेगा ! मिसेज कौशिक ?"—मि० साकेतरामने पूछा ।

"अपने इक्केमें सवार होकर मैं पर्वतीपुर रोडसे आरहा था । जानते हैं न आप, जहां भीमवरम्‌का रास्ता पापनाशम्‌के पास आकर उसमें मिल जाता है ? वहांपर मैं जरा ठहर गया । जहां कहीं रैयतोंका झुंड हो, एक डिप्टी कलेक्टरको ठहरना ही पड़ता है । उसे तो इनके संपर्कमें हमेशा रहना चाहिए न ? हां, एक आई० सी० एस०को भले ही जरूरत न हो ?"

मि० मोबरलीने हंसकर कहा—"यह इशारा आपकी ओर है मि० कौशिक।"

"नहीं, नहीं, मुझे अपनी कहानी कहने दीजिए।"—मि० साकेतराम बोले । "मैं जरा ठहर गया । वहां कुछ लोग खड़े थे । अब बताइए उन लोगोंने क्या कहा ?"

"हां, हां, आगे बढ़िए जनाब।"—कहकर सभी लोग चिल्लाने लगे । सबको यही खयाल हुआ कि कहानी यों ही मामूली जान पड़ती है ।

"मैंने पूछा, 'क्यों भाई, बारिश-बारिश तो अच्छी रही ?' सबके सब एकदम बोल उठे—'जी नहीं' और मेरी ओर आश्चर्य तथा कौतूहलभरी नजरसे देखने लगे, जैसा कि अक्सर किसान देखते हैं । इतने ही में एक बूढ़ा मेरे नजदीक आकर धीमी आवाजसे गंभीरतापूर्वक बोला—"हुजूर, बारिश कैसे हो ? जब भले-भले ब्राह्मणोंके घरकी औरतें भी गोरोंके साथ भागने लग जायें ?"

"हैं, यह क्या बात है ?" आश्चर्यान्वित होकर मैंने पूछा । मुझे संदेह होने लगा कि इधर कहीं कोई ऐसी लज्जाजनक घटना तो नहीं हो गई, जो अखबारोंतक न पहुंच पाई हो ।

"अरे स्वामी ! मैंने अपनी आंखों देखा है !"—बूढ़ा बोला ।

मैंने जरा कड़ककर पूछा—"सच कहते हो ?"—मुझे शक हुआ कि यह बूढ़ा हम ब्राह्मणोंकी हंसी उड़ाकर कुछ मजाक करना चाहता है ।

"हुजूर, झूठ कैसे ? अपनी आंखों देखी बात कह रहा हूं मैं । राम-राम, बड़ा बुरा काम है ! 'आंखोंसे देखा नहीं जाता और देखकर आंखों

पर विश्वास करनेको जी नहीं चाहता। क्या बताऊं सरकार, मैंने यह अपनी आंखों यहां, और अभी—आध घंटा भी नहीं हुआ होगा, तब देखा। अभी यहां वह जादूवाली रबड़की गाड़ी आई थी, जो पीछेसे फट्-फट् करती धुंआ छोड़ती जाती है। वह बदमाश गोरा तो टोप लगाये पहियेपर बैठा था, और उसमेंकी दूसरी गाड़ीमें—उस हरी गाड़ीमें—लाल रेशमकी साड़ी पहने ब्राह्मणकी एक भलीसी लड़की बैठी थी, जो किलकिलाती हुई जा रही थी, मानो उसे उस दुष्ट गोरेके द्वारा भगाये जानेपर बड़ी खुशी हो रही हो। हमें देख लेनेपर भी उन्हें लाज-शरमका कहीं नामतक नहीं था साहब! इतनेपर यदि देव न बरसें तो क्या अचरज है?"

फिर असिस्टेंट कलेक्टरकी ओर मुड़कर मि० साकेतरामने पूछा—"मि० कौशिक, आपकी 'साइडकार' तो हरी नहीं है?"

शरमके मारे मि० कौशिक "हां" कहकर ही रह गये। काटो तो खून नहीं बदनमें।

मिसेज मोबरलीकी हंसी जब रोके नहीं रुकी तब वे बोलीं—"और क्या आप हैट भी पहने हुए थे, मि० कौशिक?"

इधर अपनी झेंप छिपानेकी कोशिश, करते हुए मिसेज कौशिकने दूध-का 'जग' उलट दिया।

"नहीं, मि० साकेतराम आप बड़े दुष्ट हैं, निर्दय हैं। आपको ऐसी झूठ-मूठकी कहानियां नहीं बनानी चाहिए।"—मि० मोबरली बोले।

तिपाईपरकी चीजोंको ठीक करते हुए मि० साकेतराम बोले—"यह तो सच्ची-सच्ची बात है, मेरे दिमागकी उपज नहीं। भला किसीको खयाल भी हो सकता कि हैटके इस्तेमालसे ऐसे अनर्थ हो सकते हैं।"

कहा जाता है कि मि० कौशिक तबसे पत्नीके साथ बाहर जाते हुए फिर कभी हैट पहने नजर नहीं आये। हां, उस दिनसे उनके और साकेत-रामके बीचका प्रेम ठंडा जरूर पड़ गया।

—:(०):—

: ३ :

अंधी लड़की

सेनागोडन किसान था। तामिलनाडके वेल्लालपट्टी गांवमें उसका छोटा-सा खेत था। वह बड़ा होशियार, दूरदर्शी और मेहनती था। उसका पिता उसे बीस वर्षका छोड़कर मरा था। उसकी मां सदा बीमार-सी ही रहती थी। चौदह वर्षका उसका एक छोटा भाई ही बस, उसको काममें मदद देनेवाला था।

"सेनागोडन, तुझे इस वर्ष विवाह जरूर कर लेना चाहिए। ऐसे कितने दिन तक रहेगा? मैं बूढ़ी हो चली। तेरे बापने बहुत कर्जा छोड़ा था; परन्तु भगवान्‌की दयासे हम लोगोंने परिश्रम करके उसे चुका दिया है, अब तेरे सिर पर कोई बोझ नहीं। कालियक्का बड़ी सुन्दर लड़की है। लंबे कदकी, शरीर भी हृष्ट-पुष्ट है। ठीक तेरे जोड़की है। तू अकेला कहां तक दिन-रात मेहनत करता रहेगा? मैं अपने मरनेसे पहले तेरा विवाह देखना चाहती हूं, जिससे तेरा घर बस जाय। खेत पर रोटी ले जाने वाला, घरके काम-काज और ढोरोंकी देखभाल करने वाला एक व्यक्ति बढ़ जायगा। फिर मैं सुखसे मरूंगी।"

सेनागोडन चुप खड़ा था। उसकी मां दो वर्षसे अपने भाईकी लड़की-से विवाह कर लेनेके लिए सेनागोडनसे कह रही थी। सेनागोडनकी मांकी कमरमें अब बहुत दर्द रहने लगा था। इसलिए वह सोच रही थी कि खेत पर काम करने वाला एक आदमी और घरमें आ जाय तो अच्छा है।

"कालियक्काका बाप तुम्हारे बापसे लड़ता था, इसका खयाल दिलमें नहीं लाना चाहिए। उस झगड़ेके कारण हमारा नाता नहीं टूट सकता। लड़की अच्छी है, बस इस बातका खयाल करलो। पुराने झगड़ोंको भूल जाना चाहिए। लड़कीके बेवकूफ बापके कारण हम लड़कीको ग्रहण करने-में क्यों चूकें?"

सेनागोडन बोल उठा—"बहुत अच्छा। मुझे किसी लड़कीसे विवाह

करना ही पड़ेगा। फिर इसीसे क्यों नहीं ? और लड़की कहां ढूंढ़ते फिरेंगे ? दूसरी न मालूम कैसी मिले।" बुढ़िया प्रफुल्लित हो उठी। अपनी कमरका दर्द भूल गई। तुरंत उठकर भाईके घर पहुंची और यह खुश-खबरी सुनाई।

* * *

विवाह होगया। सेनागोडनके खेतमें इस वर्ष खूब फसल हुई थी। उसे अपने घर ब्याई हुई कलोर पर उतना ही अभिमान था जितना अपने खेत पर। शनिवारकी पैठमें इस कलोरके चालीस रुपये आसानीसे मिल गये। विवाहका सारा खर्च इसीसे निकल गया और सेनागोडनको विवाहके लिए कोई नया कर्ज़ा न लेना पड़ा। टीकेमें संबंधियोंके पाससे सौ रुपए और आगए। उसने ये सबके सब सौ खर्च नहीं किये।

"खाने-पीने और तमाशेमें इतना खर्च क्यों किया जाय ? हमें किसी दिन ये रुपये फिर वापस देने ही पड़ेंगे।"—सेनागोडनने अपनी मांसे कहा। टीकेमेंसे उसने पचास रुपये बचा लिये और अपने खेतका कुंआ गहरा करवा लिया, जिससे कुंएमें कुछ फुट पानी और बढ़ गया।

कालियक्का सेनागोडनके पास रहने आगई। उसके घरमें कदम रखते ही सेनागोडनका घर भरा-भरा दीखने लगा। सेनागोडनकी मांका दर्द बढ़ गया था, परंतु अब वह पहलेकी तरह बड़बड़ाती नहीं। बहू बड़ी अच्छी और मेहनती थी। काम-काज खूब करती थी। बड़ी हंस-मुख थी। घरका काम-काज और स्त्रीसे होने योग्य खेतका सारा काम वह खूब मुस्तैदीसे करती। सास मजेसे बैठी-बैठी दिन भर चरखा चलाती रहती।

दो वर्ष तक वर्षा नहीं हुई। आरकाटी गांवमें आने लगे। वेल्लाल-पट्टीके किसानोंमें जिधर देखो उधर मिर्चके टापू और लंका जाकर मजदूरी करनेकी चर्चा चल रही थी। इतनेमें गांवमें शीतलाका प्रकोप हुआ और मिर्चके टापू और लंका आदि जानेकी चर्चा कुछ दिनके लिए बंद हो गई। गांवके बाहर आना-जाना तक बंद होगया। गांवकी देवीके पुजारीने प्रथाके अनुसार उछल-कूदकर गांववालोंको देवी मैयाका यह सख्त हुक्म

सुना दिया था कि न तो कोई बाहरसे गांवमें आसकता है और न कोई गांवके बाहर जा सकता है। एक पखवारेमें छः बच्चे मर चुके थे। बहुत-से बीमार पड़े थे।

टीका लगानेवाला डाक्टर अपने औजार, दवाइयां, रजिस्टर इत्यादि लेकर गांवमें आया। परंतु बेचारेको निराश लौट जाना पड़ा। क्योंकि गांवमें कोई मनुष्य अपनेको डाक्टरसे छुआनेतकको तैयार नहीं था। गांववाले कहते थे कि देवी मैया आजकल बड़े क्रोधमें हैं। जिस बच्चेके टीका लगेगा, वही मर जायगा। डाक्टरने गांवके मुखियाको धमकी दी कि तुम बिलकुल मदद नहीं करते, मैं तुम्हारी शिकायत कर दूंगा। डाक्टरको शांत करनेके लिए मुखिया उसे अछूतोंके मुहल्लेमें ले गया और वहां इतने बच्चोंके टीके लगवा दिये कि डाक्टरकी खानापुरी अच्छी तरह हो गई और उसको अपनी रिपोर्ट भरनेका खूब मसाला मिल गया। तीसरे पहर दोनोंने अछूतोंके घरों पर हमला बोल दिया और किसी बहाने अथवा कहा-सुनीकी परवाह न करके आन-की-आनमें पचास लड़के-लड़कियोंको गाद डाला। एक ही सुईसे पचासों टीके लगा दिये गये। लोशन और स्पिरिट-लैंप पर समय बरबाद नहीं किया। एक टीका लग चुकनेके बाद सुईको लोशनसे धोकर लैंप पर साफ कर लेनेका नियम है, जिससे एक बच्चेके शरीरके कीटाणु दूसरेके शरीरमें प्रवेश न करने पायें। परंतु टीका लगाने वाले महाशय समझते थे कि इस कायदेकी पाबंदी नहीं हो सकती। क़ायदेके मुताबिक अगर सुईको बार-बार लैंपकी बत्ती पर साफ किया जाय तो सुई जल्दी ख़राब हो जाती है। नई सूइयां मंगाते हैं तो दफ़्तर वाले नाराज़ होते हैं और जवाब तलब करते हैं। दूसरे उनकी राय थी कि गांवके आदमी मज़बूत होते हैं, उनके शरीरमें बाहरी कीटाणु प्रवेश करते ही अपने-आप मर जाते होंगे। शहरवालोंकी और बात है। गांव वाले एक दूसरेसे इतना मिलते-जुलते हैं कि अगर एक गांववालेके शरीर-के कीटाणु दूसरेके शरीरमें चले भी जायं तो नुक़सान की—हमारे डाक्टर साहबकी रायमें—संभावना नहीं थी। ख़ैर।

डाक्टरके आनेसे सचमुच ही देवी मैयाका प्रकोप बढ़ा। दिन-पर-दिन मौतें अधिक होने लगीं। अछूतोंके मुहल्लेमें भी बीमारी फैल गई।

क्या आपने कभी किसी ग़रीबके घरमें बीमारी देखी है? ग़रीब—उन लोगोंकी परिभाषामें ग़रीब नहीं जिन्होंने अपनी आवश्यकताएं ज़रब दे-देकर बढ़ा ली हैं और फिर उन अनावश्यक आवश्यकताओंके छिन जाने या न मिलनेसे दुःख होता है। ग़रीब इस परिभाषामें कि जिन्हें न तो रोज़ पेट-भर अन्न ही मिलता हो और न इज़्ज़त और प्राण-रक्षाके लिए जिन वस्तुओंकी आवश्यकता है, उन्हें ख़रीदनेके लिए पैसा ही है। ग़रीबके घरमें बीमारी 'कोढ़में खाज है', जिसके स्मरणमात्रसे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। ग़रीबके घर बीमारी आई तो फिर मुक्तिका बस एक ही मार्ग रह जाता है—मृत्यु। मृत्युसे बीमारोंको शांति मिल जाती है और घर-वालोंको भी। अमीर आदमियोंके घरोंमें जहां दास-दासियां हर प्रकारके आराम पहुंचानेके सामान लिए खड़ी रहती हैं, इलाज इत्यादिकी हर तरहकी सुविधा होती है, बीमार पड़ना शौककी चीज़ है। जहां दरिद्रताका नग्न नृत्य हो वहां बीमारी कुछ और ही चीज़ है। लोग डाक्टरको फ़ीस देकर बुलानेका तो स्वप्न भी नहीं देख सकते। तहसीलके अस्पताल तक—जहां इलाज़ मुफ्त होता है—बीमारको लेजाना भी कठिन हो जाता है। बीमारको लेजानेके लिए कोई गाड़ी मिल भी जाय तो किरायेके लिए पैसा पास नहीं होता। बीमार बेचारा ज्वार, बेभड़की रोटी हज़म कर पावे या न कर पावे, खानी उसे वही पड़ती है। चावल या दूधके लिए पैसा कहां? फ़ाकेकशी और शीतला माताकी शरणमें जानेके सिवा ग़रीबोंका कोई और चारा नहीं। मरें चाहें बचें।

बेचारे सेनागोडन पर बड़ी विपत्ति आई। छोटे भाईको शीतला निकल आई थी। उसकी स्त्री लड़केकी सेवा-शुश्रूषा करती थी। इसलिए उसके भी शीतला निकल आई। बुढ़िया मांका गठियाका दर्द भी बढ़ गया। एक महीनेकी सख्त परेशानीके बाद लड़का तो अच्छा होगया

परंतु बेचारी कालियक्काकी आंखें हमेशाके लिए जाती रहीं। जब उसे मालूम हुआ कि बीमारी चली गई और उसका शरीर ठीक होगया, तब उसने आंखें मलीं कि ईश्वरदत्त सुंदर प्रकाश आंखें खोलकर देखे। परंतु चारों ओर अंधकार—घोर अंधकारके सिवाय कुछ भी नहीं था। उस अभागिनीको अपनी यथार्थ स्थितिका भान हुआ। वह रोकर अपने दिन बिताने लगी। आंखोंसे आंसुओंकी धार बाहर आती, परंतु आंखोंके भीतर प्रकाशकी एक किरण भी न पहुंच पाती।

लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम सेठ और मैं गांवमें घूमने निकले। वे साबरमती-से श्री० शंकरलाल बैंकरके साथ इधरका खादी-कार्य देखने आये थे। हाथमें रूई धुननेका धनुष लिये वे प्रसन्नचित्त हो कातनेवालियोंके घर देखते फिरते थे। वे उनको बतलाते थे कि रूई धुननेका अच्छा तरीका क्या है, कैसे सूत अच्छा काता जासकता है, कैसे रूईका अच्छे-से-अच्छा इस्तेमाल किया जासकता है। जिधर हम लोग जाते थे, उधर ही हमारे चारों ओर भीड़ लग जाती थी। उनके धनुषकी तांय-तांयकी ध्वनि सुनते ही स्त्रियां काम-काज छोड़कर झोंपड़ेसे निकल आतीं, और खड़ी होकर लक्ष्मीदास भाईका धुनना देखती थीं। थोड़ेसे मुहल्ले देख चुकनेके बाद हम लोग वेल्लालपट्टी पहुंचे। एक कच्चे झोंपड़ेके सामने पुआल पर बैठी एक लड़की चरखेमें मशगूल थी।

लक्ष्मीदास भाईने कहा, "आइए, ज़रा इसे देखें।"

हम लोग उसके पास पहुंचे। पर मुझे यह देखकर बड़ा अचरज हुआ कि वह ज्यों-की-त्यों बैठी रही। मानों उसे हमारे पास होनेकी कोई खबर ही न हो। सदाकी भांति हमेशा हंसमुख रहनेवाली किसान स्त्रियां ऐसा शुष्क-व्यवहार कभी नहीं करतीं। मैंने गौरसे लड़कीके मुंहकी ओर देखा तो मुझे पता चला कि उसकी आंखोंमें कुछ खराबी है। फिर भी वह कात रही थी। मैंने पूछा—

"बहन, तुम्हारी आंखोंमें क्या होगया है?"

उसने कुछ उत्तर न दिया। चुपचाप सूत कातती रही। परंतु कुछ दूर पयाल पर बैठे हुए एक बूढ़ेने, जो सूत उतार रहा था, कहा—

"देवी माईने इसकी आंखें लेलीं।"

मैंने पूछा, "कितने दिन हुए?"

दरवाजेमें खड़ी हुई एक स्त्रीने कहा, "दो वर्षके क़रीब होते हैं। इसे चेचक निकली थी और उसीमें यह अंधी हो गई। हम लोग इसे खाना देते हैं। इसके पतिने इसे घरसे निकाल दिया। यह अंधी रोज़ इसी प्रकार बैठकर कातती है, और हफ़्ते भरमें आठ आनेका सूत कात लेती है। यह पैसे हमारी गृहस्थीके मिर्च-मसाले भरको हो जाते हैं। भगवान्‌ने इसके भाग्यमें यही लिखा है। कोई क्या कर सकता है?"

लक्ष्मीदास भाईको रोमांच हो आया। उन्होंने पूछा—"और इसके लिए रूई कौन धुनता है?"

स्त्रीने उत्तर दिया—"मैं अपने और इसके दोनोंके लिए धुन लेती हूं। बुढ़ऊ सूत लपेट लेते हैं। हम लोग सब तैयार करके पूनियोंकी टोकरी और चर्खा उसके सामने रख देते हैं। बेचारी! और क्या कर सकती है?

मैंने पूछा—"क्या तुम इसकी मां हो?"

"हां, यह मेरे ही पेटसे जन्मी है," स्त्रीने सांस लेकर कहा।

मैंने सोचा कि इस अभागिनी लड़कीको घरसे निकाल देने वाला इसका पति अवश्य ही बड़ा राक्षस होगा। मैंने पूछा —"क्या इसका पति इसी गांवमें रहता है?"

'हां, वह यहीं है। वह इन्हीं बुढ़ऊकी बहनका लड़का है। पर वह बेचारा क्या करे! वह कैसे इस लड़कीको अपने घर रखकर खाना कपड़ा दे? अंधी हो जाने के कारण यह उसके किस काम आसकती है। एक-दो दिनकी तो बात है नहीं, ज़िंदगी-भर की आफ़त है। भगवान्‌ने उसे इतनी माया नहीं दी कि वह इसे बैठ कर खिलाये।"

मैंने लक्ष्मीदासजीसे कहा—"ग़रीबोंकी आत्मा भी बड़ी क्रूर होजाती है। यह एक स्त्री अथवा एक बैलको भी व्यर्थ बैठाकर नहीं खिला सकते।

काम करो तो रोटी मिले। इनकी शिकायत भी क्या कीजिए ? बेचारे दरिद्रतामें बुरी तरह डूबे हुए हैं।"

लक्ष्मीदासजीने सोचते हुए कहा—"सच है। पर यह बड़े अचरजकी बात है! क्या इस गांवमें कोई और अंधी स्त्री भी चर्खा चलाती है ?"

हम सब लोग बातें करने लगे और अंधे चरखा चलाने वालोंके दृष्टांत देने लगे।

लक्ष्मीदासजीने अंधी लड़कीसे पूछा—"बहन, क्या तुम्हें चरखा चलानेमें आनंद आता है ?"

लड़कीने उत्तर दिया—"आनंद ? हां। अगर चरखा न हो तो मेरे लिए जीवन काटना ही मुश्किल हो जाय। सुबहसे शाम तक कातने को न हो तो और क्या करूं ? अगर मैं कुछ परिश्रम न करूं तो अपने मां-बापसे रोटीकी आशा कैसे रक्खूं ?"

उसके वृद्ध पिताने कहा—"हम लोग बड़े ग़रीब हैं, मालिक। एक आने रोज़की कमाई भी हमारे लिए बहुत है। बेचारी लड़की चरखेसे अपने खाने लायक कमा लेती है। अगर यह चरखा न चलाए तो हमारे लिए इसको रोटियां देना बड़ा मुश्किल होजाय। इसके पतिने इसको निकाल दिया। अब चरखा ही इसका पति और संरक्षक है।"

लक्ष्मीदासजीने कहा—"इस अनुभवको मैं कभी नहीं भूलूंगा। इससे चरखेमें मेरी श्रद्धा सौ-गुनी अधिक बढ़ गई।"

४

अभागिनी

करुप्पन् और उसकी स्त्री पार्वतीको अलग घरमें कर दिया गया था। दक्षिण भारतके किसानोंमें यह प्रथा है कि जब किसी मनुष्यकी शादी हो जाती है, तो उसे उसकी स्त्रीके साथ अलग कर देते हैं कि वे अपनी अलग गृहस्थी बसावें और उसकी देख-भाल करें। उनको मेहनत-मज़दूरी करके किसी-न-किसी तरह अपना गुज़र करना पड़ता है। यह अच्छा रिवाज़ है।

आलसी ऊंची जातियोंमें सम्मिलित कुटुंबकी प्रथा होनेके कारण नित नये झगड़े खड़े होते हैं। करुप्पन्‌के माता-पिता बूढ़े थे और अपने पुश्तैनी मकानमें रहते थे। उसका बड़ा भाई खेत पर झोंपड़ीमें रहता था। करुप्पन् अपनी गृहस्थी बसाकर अलग रहनेवाला था। इसलिए खेत तीन बराबर-बराबर हिस्सोंमें बांट लिया गया था। बड़ा लड़का अपना और अपने बाप-का हिस्सा जोतता था। तीसरा हिस्सा करुप्पन्‌को दिया गया था। सबने मिलकर उसके लिए एक मिट्टीका झोंपड़ा खेत पर ही बना दिया था। मवेशियोंका भी बंटवारा होगया। करुप्पन्‌को एक जोड़ी बैल और कुछ बकरियां मिलीं। करुप्पन् तीस वर्षका उभरता हुआ जवान और पार्वती गांव भरमें सबसे सुंदर लड़की थी। पार्वतीका मुख और शरीर रानियोंका-सा था। वह हमेशा चींटीकी तरह काममें लगी रहती। मालूम होता मानों वह इस घरमें वर्षोंसे रह रही है। किसी अनजान या नई जगह नहीं आई। काम करते-करते जब वह करुप्पन्‌की तरफ देखकर मुस्करा देती तो करुप्पन्‌को लगता मानों वह किसी चक्रवर्ती साम्राज्यका स्वामी बना दिया गया हो।

पार्वती अपने बापके घरसे थोड़ासा रुपया लाई थी। इस रुपयेसे उन्होंने एक दुधार भैंस खरीदी। पानी समय पर बरसा। करुप्पन्‌ने खेत पर खूब मेहनत की। छोटेसे खेतको देखते फसल बड़ी अच्छी हुई। पार्वती दिन भर काम करती और हर समय मुस्कराती रहती। उसके लिए दुनिया-में करुप्पन्, बैल, खेत और भैंस बस यही चार चीजें थीं। इन सबसे जब उसे कुछ समय मिलता तो चरखे पर बैठकर थोड़ा-बहुत सूत भी कात लेती। चरखा वह अपनी मांके घरसे ही साथ लेती आई थी। चांदनी रातमें तो उसकी जेठानी भी अपना चरखा लेकर उसके पास आ बैठती और दोनों मजेसे काततीं और गप लड़ातीं।

भैंस दूध अच्छा देती थी। पार्वती दूधको जमा देती और सुबह उठते ही बिलो डालती। घर-आंगन झाड़-बुहार कर वह गांवमें मट्ठा बेचने चली जाती और सप्ताहमें कोलियोंकी एक गलीमें दो रुपयेका घी बेच आती।

दूसरे वर्ष करुप्पन्‌ने अपनी गृहस्थी बढ़ानेका विचार किया। "यह खेत बहुत छोटा है। हम दोनोंके लिए इस पर हमेशा काफ़ी काम नहीं रहता। अगर हम एक गाड़ी खरीद लें तो उससे भी कुछ आमदनी हो सकती है। बैलोंको भी बराबर काम मिलता रहेगा। दादा रामन्‌को देखो! वह अपनी लढ़ियासे दो-तीन रुपया सप्ताह फटकार लेता है। कभी-कभी तो चार रुपया सप्ताह तक पैदा कर लेता है। तुम्हारे मट्ठा और घी बेच-कर जमा किये हुए रुपयेमें कुछ और रुपया मिलाकर हम लोग एक गाड़ी क्यों न खरीद लें? सुना है, वीरन गांव छोड़कर जा रहा है। अपना कर्ज़ा पटानेके लिए खेत तो बेच रहा है। शायद गाड़ी भी सस्ते में दे दे।"

पार्वतीने कहा—"न, न। वीरन की लढ़िया मत खरीदना। उसकी मनहूस गाड़ी लेनेसे कहीं हम पर भी बुरे दिन न आ जायं! और फिर रुपया उधार लेकर गाड़ी खरीदनेसे क्या फ़ायदा? हम लोग जैसे हैं, वैसे ही क्या बुरे हैं?"

"पगली,! वीरनने तो शराब पी-पीकर अपना घर तबाह किया है। गाड़ीमें कौन-सी बुराई है? अच्छी बढ़िया लढ़िया है! बीस रुपया उधार लेकर पटाना मुश्किल नहीं होगा।"

"मैं तो अपने रुपयोंसे सोना खरीदकर अपने लिए एक सुंदर कंठा बनावाऊंगी।"

करुप्पन्‌ने कहा, "कैसी बेवक़ूफ़ीकी बात करती हो। गांवमें सबसे सुंदर तुम हो। गहना पहन कर अपनी शक्ल और बिगाड़ लोगी।"

करुप्पन्‌की बात ठीक भी थी। गंवारू गहना पहननेसे पार्वती की शक्ल अधिक अच्छी नहीं हो सकती थी।

"मर्द स्त्रियोंकी जरूरतों को नहीं समझते? खैर, स्त्रियोंकी अक्ल ही कितनी? मामासे सलाह करके जो तुम लोगोंको ठीक जान पड़े सो करो।"—पार्वतीने कहा।

मामा अर्थात् श्वसुरने करुप्पन्‌की बातका विरोध नहीं किया; क्योंकि

उसने देखा कि करुप्पन्‌की गाड़ी खरीदनेकी बड़ी इच्छा है। सप्ताह खत्म होनेसे पहले ही करुप्पन्‌ने महाजनसे चालीस रुपये उधार लिये और उनमें पार्वतीके रुपये मिलाकर गाड़ी खरीद ली।

करुप्पन् गाड़ी प्रायः किराये पर चलाता था। कभी-कभी लंबी मजदूरी मिल जाती तो एक रात, एक दिन और कभी-कभी अधिक समय तक भी बाहर रहता था। दादा रामन् भी उसके साथ गाड़ीमें जाया करता था। वर्ष समाप्त होनेसे पहले ही रामन्‌ने करुप्पन्‌को ताड़ीकी दुकान पर पीने-की दीक्षा दे दी। तबसे करुप्पन् जब गाड़ी लेकर बाहर जाता तो ताड़ीकी दुकान पर जरूर जाता। कभी-कभी तो ताड़ी पीनेके लिए ही गाड़ी लेकर चला जाता। गाड़ीकी आमदनी दिन-पर-दिन कम होने लगी और बैल-को भी अच्छी तरह दाना-चारा मिलना बंद हो गया। पहली बार जब करुप्पन् ताड़ीके नशेमें घर आया तो पार्वती उसे देखकर चौंकी।

"तुमने सत्यनाश कर दिया," वह चिल्ला पड़ी।

"चुप रह!" करुप्पन् ने कहा, "तेरा क्या खर्च होता है।"

"तुमने ताड़ी पी है?" पार्वतीने क्रोधसे कहा।

"हां, मैंने पी है; परंतु तेरे बापके पैसोंसे थोड़े ही पी है? तू रोकनेवाली कौन है?" करुप्पन्‌ने गरज कर कहा।

"मेरे घरमें मत घुसो। जाओ अपने बापके घर। मैंने रोटी-वोटी कुछ नहीं बनाई है।"—पार्वतीने कहा। घृणासे पार्वतीका सुंदर मुख कुरूप होगया था।

"मुंहझौंसी! मुझे तेरी पकाई रोटीकी परवाह नहीं है।" करुप्पन्‌ने उसके एक धौल जमाकर कहा।

रोज यही होने लगा। कभी-कभी तो करुप्पन् पार्वतीको बुरी तरह पीटता। वह बेचारी रो-पीटकर, बच्चेको गोदमें उठाकर—अब उसके एक बच्चा था—अपनी जेठानीके घर चली जाती और वहां घर-भरकी पंचा-यत जुटकर मामले पर विचार करती। मामला दिन-पर-दिन बिगड़ता ही गया। बैल बूढ़े होकर मरने जैसे होगये। करुप्पन्‌ने उन्हें घाटेसे ही बेच

दिया और नई जोड़ी खरीदनेका विचार करने लगा। परंतु उसके पास काफी रुपया नहीं था। उसने पार्वतीसे वादा किया कि अब मैं ताड़ीकी दुकान पर कभी न जाऊंगा। पार्वतीने दूध और कताईसे जो कुछ थोड़ा-बहुत कमाकर रक्खा था वह और अपनी विधवा बहनसे कुछ और कर्ज लेकर करुप्पन्ने बैलोंकी एक नई जोड़ी खरीद ली।

* * *

तीन मास बीते। एक दिन महाजनका आदमी पुराने कर्जका तकाजा करने आया। करुप्पन्ने कुछ दिन और ठहरनेको कहा।

एक दफा, दो दफा, तीन दफा माना, चौथी बार महाजनका आदमी एक बैल खोल ले गया। करुप्पन् दौड़ा गया और महाजनकी खुशामद की कि एक महीना और मान जाओ।

"मैं अब एक दिन भी नहीं मान सकता, शराबी कहींका! किसने तुझसे कहा था कि पिछला कर्ज बिना चुकाये ही बैलोंकी नई जोड़ी खरीद ले?" महाजन बोला।

"आप हमारे पिता समान हो सेठ जी।" करुप्पन्ने, गिड़गिड़ाकर कहा—"एक महीना और ठहर जाइए। मैं आपकी कौड़ी-कौड़ी दे दूंगा।"

"मैं एक दिन भी नहीं ठहर सकता। बुधकी पैठमें तुम्हारा बैल बेच दिया जायगा।"—महाजन जमींदारने कहा।

"मेरा सर्वनाश हो जायगा, सरकार। मैं दिवालिया तो हूं ही नहीं। अगर कुछ दिन आप और ठहर जायंगे तो आपका रुपया नहीं मारा जायगा।" करुप्पन् गिड़गिड़ाने लगा।

'न, यह नहीं होसकता,' महाजनने कहा। 'मैं ब्याज दूंगा,' करुप्पन्ने कहा।

"भाग बदमाश कहींका!"—जमींदार बोला। "ब्याज देगा? बड़ा ब्याज देनेवाला बना है! जा, तुलाखांसे किश्त लेकर रुपया अदा कर दे; नहीं तो कल ही पैठमें तेरा बैल मिट्टीके मोल बेच दिया जायगा।"

"करुप्पन्, और कोई रास्ता नहीं है।" कारिंदेने मीठे स्वरसे कहा—"कादिर मियांके पास जा। वह तेरी मदद कर देंगे।"

करुप्पन्ने जाकर अपने बूढ़े बापकी खुशामदकी कि बड़े भैयासे मुझे किसी तरह इस वक्त रुपया दिलवादो। बड़ा भाई रुपया देने पर राजी भी होगया; परंतु उसकी स्त्रीने नहीं देने दिया।

"अगर तुमने उसे रुपया दे दिया", वह बोली, "तो रुपयेसे हाथ धो लेना पड़ेगा। वापस नहीं मिलनेका। उसे कादिर मियांके घरसे ही रुपया लेने दो। हम लोग ज्यों-त्यों करके अपनी गृहस्थी चलाते हैं। कौन जानता है कि अबकी बार वर्षा होगी हो? अगर इस साल हम लोग फिर मुसीबत-में पड़ गये तो कौन हमारी सहायता करेगा?"

अंतमें बेचारे करुप्पन्को लाचार होकर कादिर मियांकी शरण लेनी पड़ी। कादिर मियां अपने घर बैठे-बैठे ही गांवके हरएक आदमीकी, यहां तक कि जमींदारके चक्की-चूल्हेकी भी ठीक-ठीक खबर रखते थे।

"तुम नहीं जानते। नंबरदार भी बड़ी मुश्किलमें हैं। उन्होंने भी मुझसे रुपया मांगा है।"

"बड़े आदमीका किसी-न-किसी तरह काम चल ही जाता है। अगर मेरा बैल बिक गया तो मुझे तो रोटियोंके लाले पड़ जायंगे। मेहरबानी करके मेरी मदद करो"—करुप्पन् बोला।

"अरे भाई! मैं तुझे रुपये कहांसे दूं?"—कादिर मियां बोले। "मेरे पास जो कुछ रुपया है वह मैं नंबरदारको देनेका वायदा कर चुका हूं।"

"मैं बड़ी मुसीबतमें हूं! गरीबकी मदद करनी चाहिए। नंबरदारका बहाना न बताइए।"

"यह बात तो ठीक है कि गरीबकी मदद करनी चाहिए; पर मैं नंबरदारसे ज़बान हार चुका हूं।"

खैर, बहुत वाद-विवादके बाद कादिर मियां रुपया देने पर राजी हुए। करुप्पन्को ४५) मिले; परंतु उसे ६०) का कागज लिखना पड़ा, जिसको उसने पांच रुपये महीनेकी किश्तके हिसाबसे बारह महीनेमें दे देनेका वादा किया। कादिर मियांने सूद नहीं लिया; परंतु करुप्पन्से यह ठहरा लिया

कि जिस महीनेमें किश्त नहीं आवेगी उसमें एक रुपया जुरमानेका देना पड़ेगा।

"करुप्पा मैंने तेरा विश्वास कर लिया।"—कादिर मियां बोले। "मेहनत करके रुपया कमाना और मुझे बराबर देते जाना। नशा मत करना। तू अच्छे घरका है। तेरी स्त्री है, बच्चा है और खुदाकी मेहरबानी हुई तो और भी बाल-बच्चे होंगे। अगर नशा किया तो बर्बाद हो जायगा।"

"ठीक कहते हो मालिक! मैं उस कमबख्त चीजको फिर कभी हाथ भी न लगाऊंगा। मैंने एक बार सबक सीख लिया। आपने मेरी मुसीबत-के समय सहायता की है। मैं आपकी मेहरबानी कभी नहीं भूलूंगा।

जमींदारका कर्ज दे दिया गया और बैल छुड़ा लिया गया। जो रुपया कर्ज चुकाकर बचा वह करुप्पन्‌ने पार्वतीके हाथमें रक्खा।

"सुनो" वह पार्वतीसे बोला "मैंने कसम खाली है कि फिर कभी ताड़ी या नशा न पीऊंगा। मुझे रुपयेकी कुछ जरूरत नहीं है। तुम जो चाहो सो करो। जो कुछ मैं कमाऊंगा लाकर तुम्हें दे दिया करूंगा।"

पार्वती बड़ी प्रसन्न हुई। वह समझी कि अब दिन अवश्य फिरेंगे। नवीन स्फूर्ति और उत्साहसे वह अपने काममें लग गई।

* *

खेतमें अधिक काम करनेको नहीं था; परंतु पार्वतीने सोचा—"मुझे कुछ-न-कुछ धंधा करके अपने पतिकी सहायता अवश्य करनी चाहिए, जिससे उसका कर्जा जल्दी उतर जाय।" कादिर मियां अपने मकानमें नई बारहदरी बनवा रहे थे और मैमारके नीचे काम करनेके लिए मजदूरों-की जरूरत थी। तीन-चार औरतें ईंट गारा ढोनेका काम कर रही थीं। वह भी उन्हींमें जा मिली।

पार्वती अंधेरे मुंह उठती; घर झाड़-बुहार और चौका बर्तन करके भैंस दुहती; फिर मट्ठा बिलोती; मट्ठा बिलो चुकने पर मट्ठा बेचकर घर लौट आती; फिर रोटी बनाकर खाती; अपने बच्चेको दूध पिलाती; और अंतमें

बच्चेको जेठानीके पास छोड़कर कादिर मियांके घर पर काम करने चली जाती; दोपहरको छुट्टीमें घर आती, परंतु वक्त इतना कम होता कि बच्चे-को दूध पिलाकर और ठंडी रक्खी हुई कांजी पीकर तुरंत ही दौड़ जाना पड़ता। संध्याके समय उसे छुट्टी मिलती। तब आकर वह घरका काम-काज देखती। सब काम बड़ी प्रसन्नतासे करती। काम तो बहुत करना पड़ता, परंतु मजदूरीसे जो चार आने रोज मिल जाते वह उन बेचारोंके लिए बड़ा भारी धन था।

पार्वती अपने पतिमें परिवर्तन देखकर फूली नहीं समाती। करुप्पन् अपने वचन पर कई महीने तक क़ायम रहा; परंतु बादमें फिर नशा करने लगा। आमदनी बर्बाद होने लगी। गाड़ीसे जो-कुछ आमदनी होती वह अब पार्वतीके हाथ न आती या आती भी तो बहुत कम। करुप्पन् गाड़ी लेकर जाता, तीन-तीन चार-चार दिन बाहर रहता, लौट कर आता तो बैलोंके लिए थोड़ी-सी करब ले आता और बाकी आमदनीके बारेमें इधर-उधरके झूठे बहाने बना देता। कुछ दिनों बाद उसने बहाने न बनाकर पार्वतीसे साफ़-साफ़ कहना शुरू कर दिया। पार्वतीने भी पूछना छोड़ दिया; परंतु वह घर पर और कादिर मियांके यहां अपना काम पहलेकी तरह मेहनतसे करती रही।

एक दिन कादिर मियां आकर अपने रुपयेके लिए ऊधम मचाने लगा। यहां तक कि आपसमें कहा-सुनी भी होगई। मिस्त्रीके नीचे काम करती-करती पार्वती झिड़कियोंकी आदी तो होगई थी; परंतु जिंदगीमें जो शब्द कानों नहीं सुने थे आज उसे कादिर मियांसे वे शब्द सुनने पड़े। वह घर गई और अंदरसे रुपया लाकर कादिर मियांके सामने फेंक दिया। उसका पति घरमें जो पाता था, निकाल ले जाता था, फिर भी पार्वतीने इतना रुपया उसकी आंखोंसे बचाकर रख लिया था। दिन भर पार्वती रोती रही। दुःखके मारे दूसरे दिन काम पर भी न जा सकी। फिर भी वह हमेशाकी तरह काम करती रही; परंतु सूदखोर कादिर मियांके मुंहसे जो शब्द उसने सुने थे उन्हें वह बहुत प्रयत्न करने पर भी न भुला सकी।

उसके मुख पर न तो अब वह हंसी थी और न उसके हृदयमें पहलेका वह उत्साह। मैमारोंके नीचे काम तो करती रही; परंतु अब वह मनुष्यों-की आवाज सुनकर थर्रा उठती थी। आश्चर्यकी बात देखिए कि कामी आंखोंको उसे देखकर अब उसकी कमजोरीमें—बनिस्बत उन दिनोंके जब उसके हृदयमें साहस था और मनमें शांति—अधिक प्रलोभन होने लगा। कादिर मियांका लड़का कामकी देखभाल करता था। उसकी दृष्टि और उसके शब्द कभी-कभी पार्वतीको बड़ा कष्ट देते।

जबसे पार्वतीने मजदूरी करनी शुरू की, उसके बच्चेका ठीक-ठीक पालन-पोषण बंद होगया था। बच्चा बीमार रहने लगा। एक दिन बच्चे-को खूब जोरका बुखार चढ़ आया और खांसी होगई। एक सप्ताहके दर्द और कष्टके बाद उसके जीवनका छोटा-सा अध्याय समाप्त होगया।

करुप्पन् स्त्रियोंकी तरह रोने लगा। उसका बूढ़ा बाप बोला, "रोते क्यों हो? जिसने दिया था उसीने ले लिया।"

"मामा" पार्वती छाती पीटकर बोली, "भगवान् ने ऐसा दुःख मुझे क्यों दिखाया? मैंने तो दुनियामें कभी किसीका कुछ भी नहीं बिगाड़ा था।"

"बेटी, रोनेसे क्या फायदा? अभी तेरी उम्र ही कितनी है? भगवान् चाहेगा तो बहुत-से बच्चे हो जायंगे। सभी चीजोंके कल्ले फूटकर बालियां नहीं बन जातीं। क्या उसके लिए कोई रोता है?"

"मुझे अब बाल बच्चे नहीं चाहिएं, मामा। भगवान्ने मुझे बहुत सुख-दुःख दिखा दिये। मुझे भी दुनियासे उठा ले।"

बूढ़ा हंसकर बोला, "अपने पतिसे कह कि नशा करके अपनी मिट्टी ख्वार न करे। इस दुःखको भूल जा। बाल-बच्चे पैदा कर, जिससे घर हरा-भरा हो और आनंदसे रहे। देवीजी तेरी सहायता करेंगी।"

"मामा, मैं जहरको कभी नहीं छूऊंगा। अगर मैं ताड़ी पीऊं तो गाय-का खून पीऊँ"—करुप्पन्ने कसम खाकर कहा।

पार्वतीकी मुसीबतोंका अंत यहीं नहीं हुआ। अगले बुधवारके दिन जब करुप्पन् रामपुराकी ताड़ी-दुकानके सामने होकर निकला तो अपनी

कसम एकदम भूल गया। वह अपनी गाड़ीमें रुईकी गांठें भरकर तिरुपुर गया था और वहांसे गाड़ीवालोंके साथ लौट रहा था। वह ताड़ीकी दूकान-के सामने रुका और अपने साथियोंसे चिल्लाकर कहने लगा—"अरे सुनो! कोई ताड़ी पीयेगा? मैं तो छूऊंगा भी नहीं। मुझे अब उसकी जरा भी चाह नहीं है।"

"अगर तुझे चाह नहीं है तो अपने पैसे गांठमें दबाकर रख और घरकी राह ले, व्यर्थमें गला क्यों फाड़ रहा है?"—एक गाड़ीवाला बोला और गाड़ीसे कूदकर ताड़ीकी दुकानमें घुस गया।

करुप्पन् कुछ देर तक खड़ा रहा। फिर वह भी दुकानमें घुस गया। "बस यह आखिरी बार है"—दुकानमें घुसते समय वह सोचने लगा।

दूसरी पेठके दिनभी यही किस्सा रहा। "नशा पी लेनेसे अपनी सब चिंतायें मिट जाती हैं?"—वह अपने साथियोंसे कहने लगा।

"बकने दो! अपने पसीनेकी कमाईका रुपया खर्च करते हैं! कौन साला हमारा हाथ पकड़ सकता है?"—दूसरा बोला।

"सच है।" तीसरा कहने लगा। "दुनिया सराय है, यारो! कौन इसमें हजार वर्ष तक जिया है! यह चांदीके टुकड़े न हमारे हैं न तुम्हारे!"

"हां, यार! न हमारे और न तुम्हारे"—चौथा बोला।

"सब ताड़ीकी दूकानवालेके हैं।" सब ठठाकर हंसे।

"उल्लुओ!" दूसरा चिल्ला कर बोला, "तुम सब-के-सब बड़े शास्त्रियोंकी तरह बैठे-बैठे चर्चा कर रहे हो। पर देखो तो, यह ताड़ी अंदर जाते वक्त कैसी जलन पैदा करती है? इन रुईके व्यापारियोंको भगवान मारे।" करुप्पन् बोला—"ये चोट्टे आजकल धोखा देकर हमारी मजदूरी बहुत काट रहे हैं।"

इसी प्रकार अंधेरा होने तक बातचीत चलती रही। फिर सब उठे और अपनी-अपनी गाड़ियां हांककर चलते बने।

कादिर मियांकी किश्त देनेका वक्त फिर आगया था। पार्वती करु-प्पन्से कई बार कह चुकी थी कि उसके घर पर जाकर पहलेसे ही रुपया

दे आओ, जिससे यहां वह न आवे।

"भाड़में जाये कादिर मियां! आने दो उसको अबकी बार। फिर उसने जबान निकाली तो सिर ही फोड़ डालूंगा"—करुप्पन् बोला।

कादिर मियां बहुत दिन तक नहीं आया। शायद वह और आवश्यक कामोंमें लगा था। करुप्पन्को भी उसकी याद न रही।

एक दिन प्रातःकाल कादिर मियांका लड़का इस्माइल आया। परंतु किश्त मांगनेके बजाय उसने करुप्पन्से पूछा—"क्या रामपुरा कुछ मिर्चों-के बोरे ले जाओगे?

"मुझे कुमार कुंदनका भूसा ले जाना है। मैंने उसे एक सप्ताहसे वादा कर रखा है।"

"उसकी क्या फिक्र है करुप्पा! कुंदनका भूसा कुछ दिन और पड़ा रहेगा तो कुछ बिगड़ नहीं जायगा। हमारे मिर्चोंके बोरे तुम ले जाओ। अगर वह कल तक नहीं पहुंचेंगे तो हमारा बड़ा अच्छा सौदा मारा जायगा।"

करुप्पन् राजी होगया। खासतौर पर इसलिए कि इस्माइल किश्तका तकाजा करना भूल गया था।

करुप्पन् गाड़ी लेकर चला गया। संध्या समय अकेली पार्वती चूल्हे पर बैठी रोटी पका रही थी। इस्माइल फिर आया।

"क्या करुप्पन् लौट आया?" उसने मकानके बाहरसे पूछा।

"नहीं, अभी नहीं"—पार्वतीने जवाब दिया।

"हां जी, वह इतनी जल्दी कैसे लौट सकता है? रास्तेमें ताड़ीकी दुकान भी तो पड़ती है!" इस्माइलने मकानके अंदर घुसते हुए कहा।

"हां, उस दुकानने हम अभागिनी स्त्रियोंको नष्ट करनेके लिए ही जन्म लिया है"—पार्वती बोली।

इस्माइल बिना कहे ही बैठ गया। पार्वती अपना काम करती रही। उसने सोचा कि मेरे पतिके इंतजारमें बैठा है। इस्माइलने बातचीत छेड़ी—

"सच्च कहना, क्या तुम अपने आदमीसे परेशान नहीं हो ?"—उसने पार्वतीसे पूछा।

"पति भला-बुरा जैसा भी हो, उससे जब एकबार औरत बंध गई सो बंध गई"—पार्वतीने बिना मुंह फेरे काम करते-करते कहा।

"हां जी ठीक है। अपना आदमी कैसा ही हो, छोड़ा थोड़े ही जा सकता है !" इस्माइलने कहा।

"कैसे दुर्भाग्यकी बात है कि तुम जैसी सुंदर और अच्छी स्त्रीके गले यह शराबी आदमी मढ़ दिया गया है !"—उसने फिर कहा।

पार्वती चुप रही।

इस्माइल पार्वतीसे उसकी कठिनाइयोंके बारेमें पूछने लगा और फिर बातें एक विषयसे दूसरे पर चलती गईं। कुछ देर बाद इस्माइल उठा और करुप्पनके इंतजारकी परवाह न करके चल दिया।

दूसरे दिन भी इस्माइल आया और करुप्पनको किसी काम पर भेजकर तीसरे पहर फिर पार्वतीके पास पहुंचा। वह अपने साथ खजूरकी खांडके कुछ लड्डू भी लेता आया और पार्वतीको जबरदस्ती देकर कहने लगा कि मेरे घर एक आसामीके यहांसे यह मुफ्तमें ही आगये थे।

"जब मैं तुम्हें देखता हूं तो मेरा हृदय एक प्रकारके आनंदसे भर जाता है"—उसने कहा।

"इसका अंत कहां होगा ?"पार्वती मनमें सोचने लगी।

"जब मैं तुम्हारे पास आता हूं तो तुम घबरासी क्यों जाती हो ? क्या तुम सोचती हो कि मैं तुमसे किश्तके लिए तकाजा करूंगा ? मुझे रुपयेकी जरा भी फिक्र नहीं है। केवल तुम मुझसे अच्छी तरह बोला करो !"—इस्माइल बोला। आगेकी कथा कहनेकी आवश्यकता नहीं है। बहुत दिनों तक पार्वतीके मनमें बड़ी उथल-पुथल होती रही। अंतमें वह गिरी। क्रूरकर्मी मनुष्य उस समय अवश्य ही सफलता प्राप्त कर लेता है, जबकि उसके शिकार की गरीबी और निस्सहायता भी उसका साथ देनेको तैयार हो जाती है।

* * *

किरंबुरकी ताड़ीकी दूकान पर खूब भीड़ थी। दुकानके बाहर अछूतोंका झुंड दीवारके सूराखके पास—जहांसे उन्हें ताड़ी मिलती थी—शोरगुल कर रहा था। अंदर धूल, मक्खियां, सड़ी हुई ताड़ीकी बदबू और गंदगीके मारे नरक का अनुभव हो रहा था। झगड़ालू मनुष्योंकी कई टोलियां बैठी हुई जमीन आसमान एक कर रही थीं।

"अगर फिर भी तूने ऐसी बात मुंहसे निकाली तो मैं तेरे सारे दांत झाड़ दूंगा।"—करुप्पन्ने कहा।

"दांत झाड़ देगा? शाबाश! जरा इस रुस्तमको देखना। जो अपनी औरत तकको तो ठीक कर नहीं सकता और दूसरोंके दांत झाड़ने चला है!"

तड़ाकसे करुप्पन्का कुल्हड़ उसके मुंह पर जाकर लगा और उसकी नाकसे खून की धारा बह निकली।

"बेवकूफ! धोखेबाज! औरतके लिए ऐसी सुंदर ताड़ी फेंक रहा है! औरतका क्या विश्वास!"—दूसरा चिल्लाकर बोला।

"अरे! देखो, रमन मर गया!"—चौथा बोला। उसने उठकर करुप्पन्से लड़ने वाले मनुष्यका नाक और मुंह पोंछा। चोट अधिक नहीं लगी थी। रमन उठा और उसने एक बड़ी-सी ईंट उठाकर करुप्पन्के दे मारी। करुप्पन्ने फुर्तीसे सिर झुका लिया। बाल-बाल बच गया।

दुकानवाला अपनी जगहसे चिल्लाया—खबरदार, दुकानके अंदर लड़ाई-झगड़ा न हो!"

करुप्पन् उठकर जल्दी-जल्दी दुकानसे निकला। उसका दुश्मन भी उसके पीछे-पीछे आया, परंतु दुकानके दरवाजे पर लड़खड़ाकर गिरपड़ा। करुप्पन् गाड़ी हांककर जोर-जोरसे गालियां बकता हुआ चल दिया। करुप्पन् रोजसे जल्दी घर पहुंच गया। उसे घरका दरवाजा अंदरसे बंद मिला।

"अरे ओ दरवाजा खोल।"—करुप्पन् चिल्लाया। "दरवाजा अंदरसे बंद करके क्या कर रही है? मैं यहां खड़ा हूं। जल्दी खोल और बैलोंको पानी पिलाने लेजा।"

मकानके अंदरसे किसी आदमीके पैरोंकी आवाज आई और दरवाजा खुलनेमें जरा-सी देर हुई। करुप्पन् किवाड़ खटखटाता और चिल्लाता रहा।

द्वार खुला। पार्वती आकर करुप्पन्के सामने खड़ी हो गई और बोली—"जरा आकर भैंसको तो देखो। आज उसकी दिन भर तबीयत खराब रही है। बड़ी लातें चलाती है, दूध भी दुहने नहीं देती।" पार्वतीने करुप्पन्को पिछवाड़ेके बाड़ेमें ले जानेका प्रयत्न किया; पर "भाड़में जाय तेरी भैंस! मुझे प्यास लगी है; पानी ला", कहता हुआ वह मकानके अंदर घुस पड़ा।

इस्माइल मकानके अंदर दीवार पर चढ़कर भागनेका प्रयत्न कर रहा था।

"ओहो, खांसाहब मकानके अंदर क्या कर रहे हैं? अरे, बदमाश औरत!"—करुप्पन्ने चीखकर कहा।

उसने पासमें पड़ा हुआ फावड़ा उठाया और पूरी ताक़तसे फेंककर उसे पार्वतीको मारा। भागते हुए इस्माइलके उसने एक कुदाली उठाकर इस जोरसे मारी कि वह तुरंत पृथ्वी पर धड़ामसे चारों खाने चित्त जा गिरा और खूनसे लथपथ होगया। फिर वह पार्वती पर झपटा। पार्वती चीख मारकर अपने जेठके झोंपड़ेकी तरफ भागी। करुप्पन् उसके पीछे दौड़ा। परंतु शोर-गुल सुनकर इधर-उधरसे आते आदमियोंको देखकर लौट पड़ा। उसने घूम कर ज़मीन पर पड़े हुए इस्माइलकी ओर देखा और उसे हिलता हुआ देख चीख मारकर उसपर फिर झपटा कि उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। परंतु लोगोंने आकर उसको पकड़ लिया।

* * *

रामपुराकी हवालातमें करुप्पन् और पार्वती दोनों अलग-अलग कोठरियोंमें बंद थे। थानेके सिपाही पार्वती की कोठरीके सामने से बार-बार गुजरते और मुस्कराते। जिसको पार्वतीसे बातचीत करनेका मौका मिल जाता, वह मीठे स्वरमें बातचीत करता। परंतु पार्वती घबराहट और दुःख-

के अपार सागरमें डूबी हुई थी। जिस समय किसी जंगली जानवरको पकड़ कर पहली बार पिंजड़ेमें बंद किया जाता है, उस समय उस जानवरके जो भाव होते हैं उनको समझनेकी यदि किसीमें शक्ति है तो वही उस किसान स्त्रीके भावोंको भी शायद समझ सके, जो पुलिस और हवालातके दलदल-में फंसी है।

"तुम्हें इकबाल कर लेना चाहिए", दारोगा बोला, "हम लोगोंसे जो कुछ हो सकेगा करेंगे।"

"छिपानेके लिए है ही क्या?" करुप्पन् बोला। "मुझे और कुछ पता ही नहीं है। मैं तो कुरुमांडुरसे शुक्रवारके दिन लौटा था।"

"भलेमानस! ऐसी उड़ी-उड़ी बातें करनेसे कुछ फायदा नहीं है। तुम्हारी स्त्रीने हम लोगोंसे सारा किस्सा कह दिया है।"

"बदजात कहींकी! वही तो इस सारी आफतकी जड़ है।"

"हां ठीक कहते हो। सारी आफतोंकी जड़ हमेशा स्त्रियां ही होती हैं। अच्छा, अब सब बात ठीक-ठीक कह सुनाओ। डरो मत।"

"मेरे पास और कहनेको क्या है? आप कहते हैं कि उसने सब कुछ आपसे कह दिया है।"

"हां-हां, परंतु तुझे भी सब बातें बतानी पड़ेंगी। वर्ना सात बरसको चला जायगा, समझा बदमाश!"

"हो जाने दो सात बरसकी। मुझे कुछ भी नहीं कहना है।" करु-प्पन् बोला।

"जबतक आप सीधे-सीधे बातें करेंगे तबतक यह बदमाश थोड़े ही कुछ बतलावेगा"—पुलिसका जमादार बोला। "इसके (उसने कुछ ऐसे शब्द कहे जो वर्णन नहीं किये जा सकते)......चाहिए। तब यह साला सच बात बतलायेगा।"

"हां हां, ठीक है!" दारोगा बोला, "जमादार, तुम्हीं इससे अच्छी तरहसे बादमें पूछ लेना।" 'अच्छी तरह' उसने विशेष ढंगसे जोर देकर कहा।

पार्वतीसे भी पूछताछ की गई।

"औरत, तू तो बड़ी सच्ची और निर्दोष मालूम पड़ती है।"—जमादार बोला, "सच बताना, क्या कादिर मियां और उसका बेटा तेरे यहां बृहस्पतिके दिन गये थे?"

"बाप और बेटा? नहीं, कभी नहीं।"—वह बोली।

"हां-हां, इस्माइल अकेला गया था!"—जमादारने पास खड़े हुए सिपाहियोंकी ओर आंख मारकर पूछा।

"मालिक, इस तरहकी बातें न करें। मेरे घर मुसलमानका क्या काम? एक औरतसे इस तरहके सवाल न करें, मुझे अपने घर जाने दें। मेरे काका और मेरी सास सब घर पर हैं। उनसे पूछकर आप सब बात ठीक-ठीक जान सकते हैं।"

"घर जानेमें अभी बहुत देर है। जबतक तू सब बात ठीक-ठीक न बता देगी, घर नहीं जा सकती।"

"अरे मेरे राम!"—पार्वतीने रोकर कहा।

"सीधे-सीधे नहीं बतायेगी?" जमादार बोला, "बड़ी चालाक औरत है। ऐसी-वैसी थोड़ी ही है, बीसियोंको उल्लू बना चुकी होगी।"

"अरे मालिक! तुम्हारे भी बहू-बेटियां हैं। जरा मुझ पर रहम खाओ।"—पार्वती बोली।

"गरम सलाखें तैयार कर लो।"—जमादारने एक सिपाहीसे कहा।

"अरे राम!" पार्वती चिल्लाकर बोली, "मेरे आदमीसे पूछ लो। वह तुम्हें सब बतला देगा। मुझ अभागिनीके क्यों पीछे पड़े हो?"

"हां-हां, तेरे आदमीसे भी पूछेंगे। उससे तो हमने पूछा और उसने हमको सब-कुछ बतला भी दिया है। तू ही छिपाती है।" दारोगाने कहा।

"क्या उसने तुम्हें सब-कुछ बता दिया है?" पार्वतीने बड़े दुःखसे पूछा।

"हां-हां, उसने हमको सब-कुछ बता दिया है। तू ही सारे मामलेकी जड़ है।"

"अरे राम! पार्वतीने हाथ मलकर कहा और पृथ्वीपर पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

"रोने-धोने से क्या होगा !" जमादार बोला, "इन बातोंसे हम धोखा नहीं खा सकते। तू बड़ी घाघ औरत मालूम पड़ती है। सच बता, कितने भोले आदमियोंको तूने उल्लू बनाकर बर्बाद किया है ?"

"अरे राम ! मेरे भाई, ऐसी बातें न करो। वह तो अपनी किस्त मांगने आया था।"

"ठीक ! अब आई राह पर। देखिए, मैंने आपसे कहा था न ?" जमादारने दारोगाकी तरफ घूमकर कहा, "तू साफ छूट जायगी। सच-सच बतादे। औरतोंको कौन जेल भेजना पसंद करता है ? तेरा मालिक भी थोड़ी-बहुत सजा पाकर छूट जायगा।"

"मुझे आज घर जाने दो। कल मैं तुमसे सब साफ-साफ कह दूंगी।"

"अच्छा।" दारोगा बोला, "इसकी सच-सच बता देनेकी इच्छा मालूम होती है।"

"एक बार घर पहुंची तो फिर यह कभी सच न बतावेगी," जमादारने कहा।

"लेकिन हम उसे रातको हवालातमें नहीं रख सकते। हमने उसे गिरफ्तार नहीं किया है।" दारोगाने जमादारको एक तरफ ले जाकर कहा।

"अच्छा, साहब ! रातके लिए पहरेमें उसे घर भेजे देते हैं और कल सुबह फिर यहां बुला लेंगे।"

करुप्पन्के बापने अपने बड़े लड़केको एक वकील कर लेने पर राजी कर लिया था। करुप्पन्की गाड़ी बेचकर उन लोगोंने खर्च जुटाया। जब यह रुपया खर्च होगया तो पड़ोसके गांवके एक रिश्तेदारके यहां करुप्पन्की भैंस गिरवी रख दी गई। सब पार्वतीको कोसते थे, क्योंकि वही सारी आफतकी जड़ थी।

मजिस्ट्रेटके सामने वकीलने तीन घंटे जिरह की और गवाही पेश करके यह साबित करनेका प्रयत्न किया कि जिस दिन यह वारदात हुई उस दिन करुप्पन् कुरुमांडुरमें था। करुप्पन्के भाई-बंद वकीलके परिश्रमसे बहुत खुश हुए।

कादिर मियां ने हलफ उठाकर कहा कि मैं करुप्पन्के घर अपने लड़केके साथ अपनी किस्तका तकाजा करने गया था। करुप्पन् गुस्सेमें आकर बुरी-बुरी गालियां देने लगा। मैंने उसे फटकारा और अपना रुपया फौरन मांगा। इसीपर करुप्पन् कुदाल लेकर झपटा और इस्माइलको मारने लगा। मैं बाल-बाल बच गया। मेरा लड़का बीचमें आगया था। इसलिए सारी चोट उसीके लगी। सौभाग्यसे कुदाल सिर पर नहीं पड़ी और दाहिना कान ही कटकर रह गया, नहीं तो मेरे लड़केकी जान जानेमें कुछ भी बाकी नहीं रहा था।

पार्वती भी अदालतमें गवाहकी तरह आई। उसने हर बातसे इंकार किया। वकीलने उसे ऐसा ही करनेको कहा था। उसने कहा कि पुलिसने उसे तंग करके ज़बरदस्ती बयान पर अंगूठा लगवा लिया।

मजिस्ट्रेटने करुप्पन्का मुकदमा सेशन सुपुर्द कर दिया। बैल भी बेच डाले गये। सेशनके लिए एक और नया वकील किया गया। पार्वती अपने पीहरमें भाईके घर मुकदमा चलने तक रहनेके लिए चली गई।

पार्वतीका भाई गरीब था। बेचारा बड़ी मुश्किलसे अपना गुजर करता था। उसकी स्त्री नलायी पार्वती पर सख्ती करती। पार्वती मकानके सामने आंगनमें खड़ी हुई अपने भाईसे रो-रोकर बातें कर रही थी कि इतनेमें नलायीने कहा, "भगोड़ी स्त्रियोंके लिए हमारे यहां जगह नहीं है। हम ईमानदार आदमी हैं, चाहे गरीब हैं।"

घरका दरवाजा बंद करके नलायी खेत पर चली गई।

"बहिन, पौरीमें जाओ" भाईने कहा, "गोबर बटोरकर खेतपर ले जाओ।" पार्वती बहुत मेहनत करती। मुफ्तकी रोटियां नहीं तोड़ना चाहती थी; परंतु फिर भी उसकी भावज उससे बड़ी क्रूरताका व्यवहार करती। वह जितना बनता पार्वतीका अपमान करती और जितनी क्रूरता उससे हो सकती वह करती थी। पार्वती हृदय पर पत्थर रखकर सब-कुछ सहती।

एक दिन एक सिपाही आया और पार्वतीसे बोला, मेरे साथ चलो।

बड़ी अदालतमें करुप्पन्‌का मुकदमा पेश होनेवाला है। पार्वती इतनी दुखी थी कि उसे यह सुनकर एक प्रकारका आराम मिला। सिपाही लंबे कदका बड़ी-बड़ी मूछोंवाला एक दयावान मुसलमान था। उसने पार्वतीका अपमान नहीं किया, पिताकी तरह बात-चीत की।

"जो कुछ हुआ हो सच-सच और साफ़-साफ़ बता देना।" वह चलते-चलते पार्वतीसे बोला, "जज साहब संभव है, गरीब पर दया करें।

"साफ़-साफ़ बात मैं कैसे कहूं?" पार्वती बोली, "कैसी शरमकी बात है।"

"काहेकी शरम! दुनियामें कितने ही आदमी ऐसा काम करते हैं। कभी-न-कभी हरेक शख्ससे गलती हो जाती है। खुदा हमेशा हमारी निगहबानी करता है, लेकिन कभी-कभी वह हमें फिसल भी जाने देता है। उसकी मर्जीसे सब कुछ होता है।

"क्या तुम मुझे साफ़-साफ़ कह देनेकी सलाह देते हो?" पार्वतीने फिर पूछा, "मैं बिरादरीसे निकाल दी जाऊंगी। मेरा आदमी मुझे घरमें घुसने नहीं देगा। तब मैं क्या करूंगी?"

"तुम्हारे आदमीको छः सालकी सजा दी जायगी। अगर तुम सच-सच कह दो तो जज शायद छः महीनेकी सजा करके ही छोड़ दें। एक पिछले मुकदमेमें ऐसा ही हुआ था। तुम्हारा आदमी अगर छूट गया तो उलटा तुम्हारा एहसान मानेगा। पांत करके बिरादरीमें मिल जाना। कुछ भी हो, हमेशा सच बोलनेसे फायदा ही होता है।"

पार्वती चुप होगई। उसके हृदयमें किसीने कहा, 'सच बोल।' परंतु एक ही क्षणमें दूसरी आवाजने पहलीको दबा दिया और वह घबराहटके मारे कांप उठी।

सिपाहीने पार्वतीको इरोड स्टेशन पर रेलमें चढ़ा दिया। पार्वतीको अपने जीवनमें रेल पर चढ़नेका यह पहला ही मौका था। स्टेशनकी भीड़ और कौतूहल उत्पन्न करनेवाला कोलाहल उसे अपने जीवनके शोकांत-नाटकका एक दृश्य-सा लगता था।

जैसे ही गाड़ी चली, गाड़ीके किसी कोनेसे एक हंसमुख छोकरा निकलकर खड़ा होगया और गाने लगा। वह अंधा था। चीथड़े पहने एक और भी छोकरा उसके साथ था। दोनों मिलकर गाने लगे।

"बदमाशो, तुम किधर छिपे थे ?" सिपाही बोला। छोकरे गाते-गाते मुस्कराने लगे। उनके गानेमें रस था। गवैयोंसे अधिक रस। न जाने कहांसे, कैसे यह भीख मांगनेवाले छोकरे गाना सीख लेते हैं! गाना खत्म होजाने पर दूसरा छोकरा अंधेका हाथ पकड़कर गाड़ीमें फिरने लगा। अंधा हाथ फैलाये था और उसके हाथ पर हर मुसाफिर पैसे निकाल-निकाल कर इस प्रकार रखने लगा, मानों वह कोई प्राचीन कालसे चले आने वाले करको भर रहे हों। पार्वतीने भी अपनी साड़ीके कोनेमें बंधी हुई एक गांठको खोला और उसमेंसे एक पैसा निकाल कर अंधेके हाथ पर रख दिया। सारे दिन उसके कानोंमें उन छोकरोंका राग गूंजता रहा। रागका गूढ़ार्थ तो उसकी समझमें नहीं आया, परंतु अंधे लड़केकी मनमोहनी वेदनापूर्ण आवाजमें गाये गये एक पदकी उसे बार-बार याद आती थी। उस पदका अर्थ था, "मैंने दुनियासे छिपाकर बड़ा पाप किया। क्या मेरे जन मुझे स्वीकार करेंगे ? क्या माता मुझे छोड़ देगी ?"

* * *

सेलममें पार्वतीको एक छोटे-से बासेमें लेजाकर सिपाहीने आधी खुराक दिलवा दी। बासेवालीने पार्वतीसे सेलम आनेका कारण पूछा। पार्वतीने कहा—"मुझे अदालतमें हाजिर करनेके लिए ले आये हैं।" इतनेमें बासेमें एक भीड़ घुसी, जिसमें अधिकतर स्त्रियां थीं। वे सब लंकाके चाय बगीचोंमें काम करनेके लिए लेजाई जा रही थीं। मुकदमेकी पेशी उस दिन नहीं हुई; क्योंकि पिछले सप्ताहसे चला आने वाला एक और कत्लका मुकदमा अभी तक चल रहा था। जब करुप्पन्का मामला पेश हुआ तब भी पार्वतीको तलब नहीं किया गया। सरकारी वकीलने कहा कि गवाह हमारे खिलाफ होगया है। करुप्पन्के वकीलने कहा कि

तब तो हम उसको पेश करेंगे । उसने इजलाससे प्रार्थना की कि पार्वती रोक ली जाय । शामको करुप्पन्‌का भाई पार्वतीको अपने वकीलके पास ले गया । वकीलने भी पार्वतीसे वही कहा, जो मुसलमान सिपाहीने उससे रास्तेमें कहा था ।

पार्वती अपने पतिको बचाना चाहती थी; परंतु अपने पापको स्वीकार करनेका विचार आते ही वह कांप उठती थी ।

"जैसा भगवान कहलायेगा वैसा कहूंगी ।"—आखिरकार वह बोली ।

"कम्बख्त !" करुप्पन्‌का भाई बोला, "भगवानका नाम लेती है । लगाओ इसके सिर पर जूते ।"

"जैसा तुम कहोगे वैसा मैं करूंगी" पार्वतीने अपने जेठसे कहा, "औरत जात बेचारी कर ही क्या सकती है ?"

वकील यही तो चाहता था । उसने सबको बाहर निकाल दिया और करुप्पन्‌के भाईसे अकेलेमें बातें करता रहा ।

दूसरे दिन कचहरीमें पार्वती एक पेड़के नीचे अन्य मनुष्योंके साथ बहुत देर तक बैठी इंतजार करती रही । अंतमें उसके कानोंमें, एकाएक 'पार्वती-पार्वती हाजिर है ?' की आवाज़ आई और वह चौंककर उठ बैठी । चपरासी उसको इजलासमें ले गया । वहांका दृश्य देखकर पार्वतीके होश उड़ गये । पश्चिमकी तरफ उसकी दृष्टि गई तो उसने देखा कि कटघरेमें जंगली जानवरकी तरह खड़ा हुआ करुप्पन् उसकी ओर एकटक घूर रहा है । उसकी दाढ़ी और बाल इतने बढ़ गये हैं कि उसको पहचानना कठिन होगया । दो महीने हवालातमें रह चुकने पर कोई भी गरीब किसान हत्यारा-सा दीखने लगेगा ।

"हाय, मेरे ही कारण यह सब कुछ हुआ !" पार्वतीने अपने मनमें कहा और दुःखसे उसकी छाती फट पड़ी । बड़ी मुश्किलसे कटघरेके सहारे वह इजलासमें सीधी खड़ी रह सकी । पेशकारने जिस समय चिल्लाकर कहा कि हलफ उठाओ, तो पार्वतीका सिर चकरा उठा और उसकी आंखोंके सामने अंधेरा छागया ।

"मैं भगवानको साक्षी देकर कहती हूँ कि मैं सच कहूँगी। उस रोज शामको मैं रसोई कर रही थी……" पार्वतीने कहना प्रारंभ किया।

"ठहरो," पेशकारने क्रोधसे चिल्लाकर कहा।

"मालूम होता है कि इसने बयान खूब पढ़ लिया है।"—जजने सरकारी वकीलकी तरफ देखकर कहा।

"परंतु सिखाये तोते दरबार नहीं चढ़ते हैं।"

इस बात पर खूब कहकहा लगा। सरकारी वकील खिलखिलाकर हंस पड़ा और अन्य वकीलोंने भी हंसकर उसका साथ दिया। करुप्पन्‌का वकील भी मुस्कराने लगा।

"देख, जो मैं कहता हूँ वह कह।"—पेशकारने कड़क कर कहा। पार्वती बेचारी आश्चर्यमें पड़ गई कि क्या जो-कुछ वकील और अपने जेठसे पाठ सीखा है उसे भूल जाना पड़ेगा, और जो यह पेशकार कहेगा वही कहना पड़ेगा? हलफ़ ले चुकनेके बाद पार्वतीसे जिरह शुरू हुई। अस्वाभाविक और विचित्र ढंगसे पूछे जाने वाले प्रश्न प्रायः ग्रामीण पार्वतीकी समझमें नहीं आते थे। वह बोली—"मैं रसोई कर रही थी। इस्माइलने आकर बुरे ढंगकी बातचीत करनी प्रारंभ की। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने इस्माइलका बुरा प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। इसी बीचमें मेरा पति आ पहुँचा और उसने क्रोधसे गरजकर मुझपर फावड़ा फेंका। मैं दौड़कर बाहर निकल आई और डरके मारे चिल्लाने लगी। मुझे नहीं मालूम कि उसके बाद क्या हुआ; परंतु मैंने इस्माइलको घरमें-से निकलकर भागते और उसके सिरमेंसे खून बहते देखा।" वकीलने पार्वतीसे इसी प्रकार बयान देनेको कहा था।

"कम्बख्त!" करुप्पन् कटघरेमेंसे चिल्लाया। उसे अभी तक आशा थी कि उसका उस दिन कुरुमांडुरमें होना साबित हो जायगा।

करुप्पन्‌के वकीलने उसके कानमें कुछ कह दिया, जिससे वह सन्न हो गया। मुकदमा खत्म होने पर असेसरोंने अपनी राय दी कि

करुप्पन्ने क्रोधमें आकर इस्माइलको सख्त चोट ज़रूर पहुँचाई है, पर उसका कत्ल करनेका इरादा नहीं था। जजने फैसला दूसरे दिनके लिए मुल्तवी कर दिया। दूसरे दिन इजलासमें फैसला सुनाया गया। जजने कहा कि मेरी राय असेसरोंके विरुद्ध है। करुप्पन्की इच्छा कत्ल करनेकी थी। मैं कादिर मियां और इस्माइल को सच्चा समझता हूं। वे करुप्पन्से अपनी किस्तका तकाजा करने गये थे। करुप्पन् नशा करनेका आदी था। उसने क्रोधमें आकर कुदाल लेकर उन दोनों पर हमला किया। सौभाग्यसे और लोग आगये और दोनों बाप-बेटे मरनेसे बाल-बाल बचे। पार्वतीका बयान माननें लायक नहीं है। एक तो करुप्पन् उसका पति है और स्वभावतः उसे बचाना चाहती है, दूसरे उसने मजिस्ट्रेट और पुलिसके सामने भिन्न भिन्न बयान दिये हैं, इसलिए भी उसकी बातें माननेके काबिल नहीं हैं। अंतमें जजने करुप्पन्को छः सालकी सख्त सजाका हुक्म सुना दिया और सरकारी वकीलसे इस बातकी भी सिफारिश की कि वह इजाजत लेकर पार्वती पर झूठी गवाही देनेके लिए मुकदमा चलाएं।

करुप्पन् हुक्म सुनकर चिल्लाने लगा, "मेरी औरतने मुझे धोखा दिया। यदि औरत आदमीकी आंखोंमें धूल फेंके तो क्या आदमीको चुपचाप खड़े-खड़े देखना चाहिए?"

"ले जाओ इसको!" जजने कहा। सिपाही उसको यह कहते हुए ले चले कि बकता क्यों है; ये सब बातें अर्जीमें लिखकर हाईकोर्टमें अपील भेजना।

* * * *

मुकदमा खत्म होनेके बाद पार्वतीकी उसके जेठ या किसी औरने कोई खबर नहीं ली। बड़ी मुश्किलसे बेचारी किसी तरह रामपुर पहुंची। बूढ़े मुसलमान सिपाहीको उस पर दया आई। वह उसको पहुंचाने चला।

"तुमको सच-सच बोलना चाहिए था, और सब कुछ शुरुमें ही कह देना चाहिए था।" वह बोला, "जजने तुम्हारा विश्वास नहीं किया;

क्योंकि तुमने मजिस्ट्रेटके यहां कुछ और ही बयान दिया था और यहां भी तुमने सब बात सच्ची-सच्ची नहीं बताई।"

पार्वती सुन रही थी, परंतु उसका समझमें कुछ नहीं आता था। जिस समय लोग रामपुरा पहुंचे, रात काफी बीत चुकी थी। सिपाहीने पार्वतीसे कहा कि बाहरके बरामदेमें सो रहो। सबेरे उठकर अपने भाईके गांव चली जाना। रातभर पार्वतीको नींद नहीं आई। फिर अपनी भावजके सामने जानेकी उसकी हिम्मत नहीं होती थी। उसकी दुनिया खत्म हो चुकी थी। भगवानने भी उसको त्याग दिया था। आत्मघात करनेके अतिरिक्त और कोई मार्ग उसके सामने नहीं था। बस यही एक दवा उसके पास थी, जिसके प्रयोगसे वह इस कष्टमय जीवनसे बच सकती थी। उस दवाको उसके पाससे कोई नहीं छीन सकता था। उषाकालकी ठंडी-ठंडी वायु चली। रात-भरकी जगी थकित दुखी पार्वतीकी आंख झपक गई। वह एक करवट पड़ी सोती रही। प्रातःकाल छः बजे उठकर सिपाही आया तो उसने देखा कि पार्वती मजेसे पड़ी खुर्राटे भर रही है। वह सोचने लगा, "अपने पतिको जेल भेजकर यह औरत बड़ी निश्चिन्त है। धोखेकी टट्टी इन औरतों पर विश्वास करना बड़ी मूर्खता है।"

पार्वती एक बच्चेका रोना सुनकर उठ बैठी। वह स्वप्न देख रही थी कि उसका बच्चा दुःखसे चीख रहा है। उठ बैठनेके बाद भी कुछ क्षण तक उसे यही भ्रम बना रहा कि उसीका बच्चा रो रहा है। फिर उसे खयाल आया कि 'अरे! मेरा बच्चा तो बहुत दिन हुए मर गया और मैं अब पृथ्वी पर बिना घरके निर्वासित खोई हुई स्त्री हूं।'

वह उठकर बैठी तो देखा कि छोटा-सा सांवले रंगका एक छोकरा सामने खड़ा है। वही मुंह पर हाथ रखकर बच्चेके रोने की-सी आवाज करता है। एक बार वह 'मां' की आवज करता और फिर बिल्कुल ठीक बच्चेकी आवाजकी नकल। जैसे ही पार्वती उठकर बैठी, वह चुप हो गया और पैसा मांगने लगा।

"लड़के, तुम्हारा घर कहां है?" पार्वतीने पूछा।

"एक पैसा देदो।"

"तुम्हारे बापका नाम क्या है?" पार्वतीने फिर पूछा।

"मुझे नहीं मालूम।" लड़का बोला।

"क्या तुम्हारे मां भी नहीं है?" पार्वतीने पूछा।

"है, परंतु वह मुझे सुअरवालेके साथ छोड़कर चली गई।"

"तुम्हें खाना कौन देता है?"

"खाना मैं खुद कमाकर खाता हूं। मुझे जो-कुछ मिलता है, मैं सूअर वालेको दे देता हूं, कभी-कभी वह मुझे खिलाता है; परंतु जब पैसे देता हूं तब।"

"तुमने यह बच्चेकी बोली कहांसे सीखी?"

"यह! यह मैंने और मेरे एक साथीने तंजोरमें सीखी थी। मुझे पैसे देदो, अब मैं सूअरवालेके पास जाऊंगा।"

"सूअरवाला कौन है?"

"वह इस गांवमें आया है। सूअर बेचता और खरीदता है। हम लोग एक जगहसे दूसरी जगह फिरते हैं।"

इतनेमें सिपाही निकलकर आया और उसने छोकरेको धमकाकर भगा दिया।

"ये लोग चोर हैं," सिपाही बोला। "दिनमें इस प्रकार आकर टोह लगा जाते हैं और फिर रातको चोरी कर लेजाते हैं। मालूम होता है, तुम रातको खूब सोई?"

"ईश्वर तुम्हारा भला करे। तुमने मेरी मदद पिताकी तरह की है।" यह कहकर वह फूट-फूटकर रोने लगी।

सिपाहीके दिल पर जरा भी असर नहीं हुआ।

"अब तुम अपने भाईके गांवको चली जाओ।" उसने कहा, "देर करोगी तो धूप चढ़ आवेगी और तुम्हें रास्तेमें तकलीफ होगी।"

दोपहरके समय भूखी, अत्यन्त थकी हुई पार्वती यह आशा लेकर अपने भाईके यहां पहुंची कि शायद भावजका हृदय मेरी बुरी हालत

देखकर कुछ पिघल जाय; परंतु अफसोस, उसके भाईके घर सारी खबर पहले ही पहुंच चुकी थी। भाई खेत पर चला गया था और भावज दरवाजे पर थी।

"आ गई फिर?" वह बोली, "भाग यहांसे, निगोड़ी पापिन कहीं-की! यहां ऐसी चांडालिनीके लिए घर नहीं है, जो अपने खाविंदको खाकर मुसल्लोंके संग फिरती है। क्या तू मेरे घरमें बैठकर मेरे सीधे-सादे खाविंदका भी खून चूसना चाहती है? मेरे बेटे-बेटियां हैं। उनके साथ तुझे कभी न रक्खूंगी। जा, उसी आदमीके पास, जिसे तूने अपना नया खसम बनाया था। यहां तेरे लिए जगह नहीं है।"

"भैया! भैया!!" पार्वती निराश होकर चिल्लाई। उसने समझा कि भाई मकानके अंदर होगा; परंतु कुछ जवाब नहीं आया। "नहीं बोलोगे? तुमने भी मुझे छोड़ दिया?" वह रोकर बोली, "भगवान, मेरी सहायता करो।"

वह फूट-फूटकर रोने लगी और उसी प्रकार भूखी और थकी वहां-से चल पड़ी।

* * *

सूरज खूब तप रहा था। परंतु पार्वतीको अब न तो भूख ही मालूम होती थी और न गरमी ही। उसके सूखे हलक और ओठोंसे राम-नाम—जैसा टूटा-फूटा वह जानती थी—निकल रहा था। वह जल्दी-जल्दी एक दूसरे गांवकी तरफ चली जा रही थी, जहां पहाड़ी पर एक बड़ा मंदिर था।

वह पहाड़ी पर चढ़ने लगी; परंतु वह इतनी थकी थी कि कुछ ही कदम चढ़कर एक चट्टानकी अर्धछायामें धड़ामसे गिर पड़ी।

कुछ समयके बाद वह उठी और फिर चढ़ने लगी। इस तरह मंदिर-के पास पहुंच तो गई; परंतु अंदर नहीं घुसी। मंदिरके सामने साष्टांग लेट गई और प्रार्थना करने लगी। फिर स्वस्थ चित्त होकर उठी और वहांसे, मंदिरसे भी अधिक ऊंची, एक चोटी पर गई। चढ़ाई बड़ी ऊंची थी;

परंतु पार्वतीमें न जाने कहांसे एक नई शक्ति आगई। वह चोटीपर पहुंच गई। उंचाई इतनी थी कि नीचे देखने मात्रसे चक्कर आने लगता था। चोटीके पश्चिमी किनारेसे उसने नीचे देखा।

"हे जगज्जननी, मुझे माफ करो! अपनी गोदमें ले लो।" यह कहकर चिल्लाई और धड़ामसे कूद पड़ी।

एक क्षणका सुख और शांति! फिर पृथ्वी और आकाश घूम उठे। ओह! कैसा शांतिमय और सुंदर! फिर एक भयंकर धड़ाका हुआ; जैसा कि उसने अपने जीवन-भरमें कभी नहीं सुना था। कोई चीज उसके दिमागमें फट पड़ी और फिर अनंत शांति......!

पार्वतीकी दुखी आत्मा पिंजरेसे उड़ गई!

५

प्रायश्चित्त

१

गांवके बाहर इमलीकी बगियामें लड़के बंदरोंपर ढेले फेंककर खेल रहे थे। बड़े लड़कोंको तो इसमें मजा आरहा था; लेकिन छोटे लड़कों और बंदरोंकी बारी-बारीसे शामत आती थी, पर शोरगुलसे निर्बलोंमें भी साहस आजाता है। यह खेल बहुत देरतक चलता रहा।

एकाएक एक कोनेसे बड़े जोरकी चीख सुनाई दी। लड़के दौड़े। देखा—एक लड़केपर एक जबरदस्त बंदरियाने हमला किया है। अरे, यह तो गांव-भरका प्यारा मुकुंदन् है! उस घबराहट, चिल्लाहट और शोरगुलके बीच भी यह मालूम होनेमें देर न लगी कि लड़कोंने उस बंद-रियाके बच्चेको खदेड़ा था, और वह पेड़परसे गिर पड़ा था। मुकुंदन्ने बच्चेको पकड़ लिया था और उसकी मां अपने बच्चेको पकड़नेवाले पर टूट पड़ी। बंदरियाने मुकुंदन्का गला धर दबाया और उसके मुंह और हाथोंको नोचने लगी। लड़के जोरोंसे चिल्लाकर मुकुंदन्से कह रहे थे—'अरे, बच्चेको छोड़ दे!'

पर मुकुंदन्के होश-हवाश दुरुस्त न थे। उसकी समझमें न आया कि लड़के क्या कह रहे हैं। किसी लड़केकी इतनी हिम्मत नहीं होती थी कि जाकर मुकुंदन्को छुड़ावे। क्रोधांध बंदरिया मुकुंदन्को काटती-नोचती जारही थी। इतनेमें 'परिया' (अछूत) का लड़का मरी कूदकर आगे बढ़ा और मुकुंदन्के हाथसे बच्चेको छीन लिया।

अब बंदरिया मुकुंदन्को छोड़ मरीपर झपटी। मरीने बच्चेको जमीन पर फेंक दिया और एक लकड़ी लेकर खड़ा होगया। बंदरिया अपने बच्चेको आड़में कर पीछे हटी। बच्चा मांके पेटसे चिपट गया और बंदरिया भागकर पेड़ की सबसे ऊंची डाल पर जा बैठी।

इधर मुकुंदन् बेहोश पड़ा था। लड़के इतने डर गये थे कि मुकुंदन्-के पास कोई ठहरा भी नहीं। उसकी सेवा-शुश्रूषा कौन करे? लड़के चिल्लातेहुए भागे—'मुकुंदन् मर गया! मुकुंदन् मर गया!! बंदरने मुकुंदन्-को मार डाला!'

मरीका छोटा भाई भी भागा जा रहा था। मरीने उसे बुलाकर कहा—

"चिन्नन, जा घरसे पानी मांग ला।"

यह कहकर मरी मुकुंदन्के पास बैठ गया और उसका खून पोंछने लगा।

थोड़ी देर बाद चिन्नन मिट्टीके बर्तनमें पानी ले आया। मरीने मुकुं-दन्के मुंह पर पानी छिड़का, जिससे मुकुंदन्ने आंखें खोलीं, पर खून वैसा ही बहता रहा।

मरीने कहा, चिन्नन, चलो हाथ लगाकर मुकुंदन्को उसकी मांके पास हम पहुंचा आवें।

२

मुकुंदन्की मां विधवा थी। उसके पतिको ज्वर आया था, पूरे तीन दिन रहा, गांवके पंडितजीकी दवा हुई पर शांत नहीं हुआ। आखिर शांत हुआ तो जान लेकर ही। अब उसे केवल परमात्माका ही भरोसा था। बेचारी विधवाने परमात्मा पर अपनी नाव छोड़कर बड़ी धीरतासे

बिपतके दिन काटे। पति गांवमें अपने खदुकों (लेनदारों) को जो-कुछ कर्ज देकर मरा था, वह सब उसने वसूल कर लिया और खेत लगान पर दे दिया। जिसने खेत लिया था वह समय पर लगान चुका दिया करता था। इस तरह बेवा किसी तरह घर चलाने लगी।

मुकुंदन् पाठशाला भेजा गया। गांवमें नामको एक पाठशाला थी जो उस समयके लिए काफी थी। घर पर मां मुकुंदन्को राम-हनुमान की तथा महाभारतकी कथाएं सुनाया करती। वैसी सुंदरी और अकेली विधवाके लिए जिंदगी भारी तो थी, मगर वह परमात्मामें विश्वास रखती थी। व्रत-नियमोंमें लगी रहकर वह दिन काट रही थी। मालूम होता था कि स्वयं परमात्मा उसकी खोज-खबर लेते थे।

वह स्नान पूजा-पाठके बाद चौकेके पास बैठी ही थी कि मरी और चिन्नन मुकुंदनको लेकर पहुंचे, और उसके आगे लिटा दिया। मुकुंदन्को खूनसे तर देखकर वह उसकी ओर झपटी।

वह चिल्ला उठी—'अभागो! इसका तुमने क्या कर डाला? यहां मुकुंदन्की माताका डरकर अपने बच्चेकी ओर झपटनेमें और बंदरियाको अपने बच्चेके लिए मुकुंदन् पर झपटनेमें एक विलक्षण सादृश्य था।

थोड़ेमें मरीने सारी कथा कह सुनाई। माताका हृदय कृतज्ञतासे भर गया। और वह हंसकर बोली, 'बेटा तुम कौन हो?'

मरी और चिन्नन पीछे हटते हुए बोले, 'हम लोग परिया हैं माई!'

यह सब भूलकर वह चिल्ला उठी, "अरे अभागे, तूने यहां आनेकी हिम्मत कैसेकी? और यहां चूल्हेके पास! हाय भगवान, अब मैं क्या करूंगी!"

उसने एक बड़ा-सा चैला उठाया और चिन्ननकी ओर चलाया। मरी कूदकर बीचमें आ गया, और खुद पर वह चोट सह ली। मरी गिर पड़ा। चिन्नन चिल्लाता हुआ निकल भागा।

अब तो मुकुंदनकी मां घबराकर और भी चिल्लाने लगी, "पिशाचने

मेरा घर खराब कर दिया, चौका अशुद्ध कर दिया, और ऊपरसे गांव-भरमें मेरी यह दुर्गति करता फिरता है। हाय रे भगवान !"

मरी उठ खड़ा हुआ। झुककर, घायल पैरको पकड़े हुए, जिसमें बहुत दर्द हो रहा था, बोला, "माई, हमने तो तुम्हारे लड़केको बंदरियासे बचाया, जो उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालती और तुमने उलटे मेरी टांग तोड़ दी !"

"चूल्हेमें जाय तू और तेरी बंदरिया ! अब इस पापसे मैं कैसे छूटूंगी ? तेरी तो छायासे पाप लगता है और तू मेरे घरमें घुस आया था—नहीं, नहीं, ठेठ चौकेमें और ठाकुरजीके घर तकमें चला आया ! हाय राम, सब सत्यानाश होगया ! हाय राम, हाय भगवान, हाय कृष्ण ! इस पापसे कैसे छुटकारा होगा ?"

मरी अभी वहां खड़ा-खड़ा पैर मल रहा था। उसका पैर बहुत दुखता था।

"निकल सत्यानाशी, भाग यहांसे !" वह चिल्लाने लगी और उसके पैरमें एक लकड़ी और मारी। बेचारा बिलबिला उठा और बाहर सड़क पर आरहा।

इधर सामने दरवाजे पर भीड़ भी आ जुटी थी।

लोग घबराकर चिल्ला उठे—हैं, इस घरमें यह साला अछूत घुस गया था !

दूर सड़कके उस किनारे मरीकी मां चिल्ला रही थी—मेरे बच्चेको, मेरे लालको, मत मारो !

३

दो साल बीत गये। मुकुंदन् बड़ा होगया। अब वह दो मील दूर कमलापुरके मिडिल स्कूलमें पढ़ने जाता है। बेलमपट्टीसे दो लड़के और वहां पढ़ने जाते हैं, मुकुंदन्का उनका साथ रहता। बंदरकी कथा तो उसे बिलकुल भूल ही गई है। हां, मुकुंदन्के चेहरे पर उस घावका एक लंबा-सा दाग रह गया है।

मरीकी मां मरोको इसके लिए कभी क्षमा नहीं कर सकी कि वह क्यों ऊंची जातिके लड़केके मामलेमें दखल देने गया। उसे जितनी तकलीफें हुईं, जो विपत्तियां आईं, सब-कुछ वह इसी एक पापके कारण मानती थी। उसने बड़ी मुश्किलसे कौड़ी-कौड़ी जोड़कर बकरे खरीदे और लगातार तीन साल तक एक-एक बकरा मरियाई (अछूतोंकी देवी) के वार्षिक पूजनमें बलि देती गई, जिससे देवीका कोप कुछ शांत हो; पर देवी कब सुनती है? पहले उसका पति हफ्तेमें एक बार ताड़ीखाने जाता था, अब रोज जाने लगा। गरीबी और परेशानी बढ़नेके साथ-साथ यह आदत भी दिन-दिन बढ़ती ही गई। बेचारीको अब दिन-दिन भर बन-बन लकड़ी चुनते घूमना पड़ता। इस तरह जो चार लकड़ी वह चुनकर लाती उसे बेचकर दो पैसे पाती; पर वह अभागा उन्हें भी छीन ले जाता और ताड़ी पी जाता! लड़के भूखे सो रहते, फिर वह नशेमें गिरता-पड़ता घर पर खानेके लिए आता, पर यहां खानेको क्या धरा था? इसलिए उलटे इस बेचारीको मार खानी पड़ती।

पर मार खाते हुए भी वह लड़कोंको धीरज देती थी, चिन्ता न बेटा! अबकी भर्तीवालेके आते ही हम लोग केगड़ा (लंका) चले चलेंगे, मरे यह अभागा यहीं ताड़ीखानेमें!

उस साल सूखा पड़ गया; सब खेत सूख गये। फसल चौपट होगई। गरीबोंके लिए कहीं कोई काम न रहा, सबके लिए ये दिन मुश्किलके थे; पर अछूतोंकी दशा तो सबसे खराब थी। उनपर तो मानो आस्मान ही टूट पड़ा था। लंकाके चायबागानोंके लिए कुली भरती करने एजेंट आये। ऐसे समयमें भूखों मरते लोगोंने देवताके समान उनका स्वागत किया।

जमींदारोंने कहा, "ये सब गंवारोंको फुसला बहकाकर परदेश लेजाने आये हैं। बेचारोंको झूठी बातें सुनाकर ठग लेते हैं।" इतने पर भी दुर्भाग्यके मारे आपत्तिग्रस्त पुरुष और स्त्रियां उनके साथ खुशी-खुशी गये। मरीकी मांने भी उसीमें मुसीबतका अंत देखा। वह अपने लड़कोंको साथ लेती गई। पहले तो उसका पति घरपर ही रहने वाला था; पर

चलते-चलते वह भी साथ होलिया। वह बार-बार कसमें खाता कि अब फिर शराब छूऊंगा भी नहीं।

४

तीन साल बीत गए। मुकुंदन्ने अपनी लोअर क्लासकी पढ़ाई पूरी की। इसमें उसकी बड़ी तारीफ हुई। वह अपनी मांसे बहुत प्रेम करता था। उसने सोचा, बस दौड़कर मांको परीक्षाका फल सुनावें। दिनभर वहीं खेला जाय। मुकुंदन् इसपर राजी नहीं होता था। एक बड़े लड़के ने कहा—

"मुकुंदन्, तुमसे तो लड़की भली। अरे, चलो देर होजायगी तो मैं तुम्हें घर पहुंचा आऊंगा।"

"हां-हां, चलो, चलो।" एक साथ कई लड़के बोल उठे। मुकुंदन्-को सबकी बात रखनी पड़ी और यह मंडली चल पड़ी।

कोई पर्वका दिन था। बहुतसे यात्री आये थे। लड़कोंको खूब मजा आया। खुलकर खेले। उनमेंसे एक लड़केका बाप रुईका व्यापारी था। वह अपने लड़केको बहुत अधिक प्यार करता था। उस लड़केके पास पांच रुपयेका एक नोट अपने निज खर्चके लिए था; बस और क्या चाहिए? लड़कोंने मिठाई खरीदकर खाई और दिनभर धूपमें धमा-चौकड़ी मचाते रहे।

पहाड़ीसे उतरते समय मुकुंदन्ने कहा, रामकृष्ण, मेरा तो प्यासके मारे गला सूखा जारहा है।

लड़के बोल उठे, यहां पानी कहां?

इसपर एक लड़का बोला, बड़े बेवकूफ हो! तुम्हें हनुमान पोखरेका पता नहीं है? यहीं तो है।

सचमुच वहीं पास ही हनुमानजीकी एक बहुत बड़ी मूर्त्ति चट्टान काटकर बनी हुई थी। उसीके पास एक छोटा कुंड भी था। उसका पानी बड़ा गंदा था, पर मुकुंदन् बहुत प्यासा था, उसने खूब डटकर पीया; कुछ देर तक लड़के हनुमानजीकी पूंछकी तारीफ करते रहे, फिर वहांसे

रवाना हुए। मुकुंदन्‌को घर पहुंचनेमें अंधेरा होगया। घर-घर दीये जल गये थे। बोली सुनते ही मुकुंदन्‌की मां दरवाजा खोलने लपकी।

वह बोली, बेटा! मैं तो दिनभर तेरी बाट देखती रही! तू आज कहां चला गया था? आखिर तुझे इतनी देर कहां हुई? तूने तो सवेरे कहा था कि परीक्षा-फल सुनते ही घर चला आऊंगा?

मुकुंदन्‌ने भोलेपनसे कहा, हां मां, कहा तो था; पर हम लोग उस पहाड़पर मंदिर देखने चले गये। मां, हम लोग आज खूब खेले। मैं तो लौट आना चाहता था; पर किसीने आने नहीं दिया।

आश्वासन देते हुए मांने कहा, उसके लिए कोई फिक्र नहीं, पर हां, तुम्हारी परीक्षाका क्या हुआ, बेटा?

"मां, मैं प्रथम श्रेणीमें पास हुआ हूं और सब लड़कोंमें प्रथम आया हूं।"

माताने मुकुंदन्‌को छातीसे लगाया और रोने लगी। उस समय उसके मनमें क्या-क्या विचार उठ रहे थे, यह शायद उस जैसी कोई विधवा-माता ही समझ सकती है।

५

कुछ दिनों पहले हमने इस घरमें हंसी-खुशीका बाजार गरम देखा था, पर इन कुछ दिनोंमें ही, यह क्या होगया? सारा घर उजाड़-सा क्यों होगया?

उस पहाड़ी मंदिरसे लौटनेकी रातसे ही बेचारा मुकुंदन् बीमार पड़ा। उसे वमन और दस्त होने लगे; किसीको यह खयाल नहीं हुआ कि उसे हैजा होगया है। सेवा करते हुए उसकी गरीब मांको भी छूत लगी—उसे भी दुष्ट हैजेने पकड़ा। गांवोंमें अज्ञान और दरिद्रताका अखंड साम्राज्य रहता है। बीमार भाग्यसे ही बचते हैं, कोई दूसरा चारा नहीं होता है। अस्तु, पड़ोसियोंकी सेवा-शुश्रूषा या अपने सौभाग्यसे, मुकुंदन् तो किसी तरह बच गया, पर उसकी मांने किसीको अपनी बीमारीका पता

नहीं चलने दिया। आखिर जब वह न छिपा सकी, तब लोगोंको खबर हुई; लेकिन अंतमें क्या बन सकता था ?

एक बार सन्निपात प्रकोपमें वह चिल्लाकर उठ बैठी, 'मेरे लाल ! मेरे बेटे ! तुझे अब कौन देखेगा ?' और फिर गिरकर बेहोश होगई। कुछ देर बाद उसके प्राण-पखेरू उड़ गये। मुकुंदन् अनाथ होगया।

६

पंद्रह साल बीत गये। अब उन पुराने घटना-स्थलोंको ढूंढ़ निकालना भी मुश्किल है। बेलमपट्टी तो प्रायः उजड़ ही गई। मंदिरके पुजारी-का घर छोड़कर ब्राह्मण पट्टी तो प्रायः खतम होगई। चेरी भी आधा उजड़ गया है।

अपने मां-बापके साथ सिलोनमें मरी और चिन्नन चहुते गये। मरी-के बापने सिलोन आनेके कुछ ही दिन बाद फिर शराबखोरी शुरू कर दी थी। थोड़े दिनों बाद वह नौकरीसे हटा दिया गया। तब अपनी औरतसे झगड़कर वह सिलोनमें इधर-उधर भीख मांगता रहा। बादका किसीको पता नहीं कि उसका क्या हुआ। मरी और चिन्नन सिलोनके एक चायबागानमें अपनी मांके साथ काम करते रहे। उन्होंने अपना चाल-चलन ठीक रक्खा। मरी अब २५ सालका जवान था। उसकी मां-ने उसी बागानके किसी दूसरे कुलीकी लड़कीसे उसका विवाह ठीक किया। विवाह हो भी गया। विवाह होनेके कुछ ही दिनों बाद मरीने घर लौटने-की बात शुरू की। वह बोला—

मां, आखिर हम लोग किसलिए इस परदेशमें अपनी जान देते रहें ? यहां हमारा न घर है न द्वार; न कोई धर्म है न ईमान; देवता और परमात्माका तो यहां कोई नाम ही नहीं जानता और न किसीकी जिंदगीका ही यहां ठिकाना है। यहां तो हम सभी गाय-बैलोंकी भांति गोल बांधकर रहते हैं। मेरा मन तो घर जानेको लगा हुआ है। अब अपने पास कोई दो सौ रुपये भी जमा होगये हैं। चलो, घर लौट चलें। घर चलकर दो गाय खरीद लेंगे, या एक जोड़ी बैल और एक गाड़ी

खरीद लेंगे, और उसीसे गुज़र करेंगे। देशमें तो सैकड़ों आदमी उससे भी कममें खुशीसे रहते हैं।

मां बोली, हां बेटा, चलो चलें। मैं भी अपनी उसी कुटियामें मरना चाहती हूं।

सलाह पक्की हो गई। इसके बाद कुलियोंका जो पहला जत्था घर लौटा, ये लोग भी उसके साथ लौट आये। मरीने एक जोड़ी बैल और एक गाड़ी खरीद ली।

पर दुर्भाग्य भी सिर पर आ खड़ा हुआ। दो दिन बाद ही एक बैल लंगड़ाने लगा। पीछे मालूम हुआ कि बैल खरीदनेमें मरी ठगा गया है। अब वह उसे बेच भी नहीं सकता। फिर उसने एक और बैल खरीदा; मगर उसके बाद ही ढोरोंकी कोई बीमारी शुरू हुई जिससे मरीके तीनों बैल मर गये। अब उसने गांवके किसी किसानके यहां नौकरी की। उसके लिए अपने परिवारका भरण-पोषण मुश्किल होगया। मगर किसी तरह वह गुजर करता जाता था। चिन्नन उससे झगड़कर मलाया टापू-की ओर मजदूरी करने चला गया।

मरीको अपनी स्त्री पूवीसे सुख था। वह थी तो १५ सालकी ही लड़की, पर होशियार, मिहनती और धीर इतनी कि २५ सालकी औरत-के बराबर काम करती थी। जब उसे फुर्सत मिलती, वह जंगलकी ओर निकल जाती और थोड़ी लकड़ी चुन लाती, मैदानोंमें जाकर गट्ठरभर घास छील लाती, और बाजारमें ठीक भावसे बेच आती। सौभाग्यसे उसे दाम भी पूरे मिल जाते। इस तरह वह हफ्तेमें चार-छः आने पैसे लाकर घर-खर्चमें सहायता पहुंचाती। किसी तरह चूल्हा जलता रहता।

इस साल बेलमपट्टीकी बुरी हालत है। वर्षा तो बिलकुल हुई ही नहीं। सच पूछो तो चार सालसे वहां सूखा पड़ता आ रहा था; मगर इस साल तो अति होगई। करीब-करीब सभी कुएं सूख गये। सिर्फ खेती ही नहीं सूखी, पीनेका पानी मिलना भी कठिन होगया। कितने तो घर-बार छोड़कर रोजीके लिए परदेश भागे। मगर मरी और उसकी

भी कहीं जा भी नहीं सकते थे; क्योंकि बूढ़ी मां हिलने को तैयार नहीं थी। वह कहती, मुझे यहीं मरने दे, बेटा! यह तो मरियाई देवीका कोप है न? यहां रहो या कहीं भाग जाओ, देवी छोड़ेगी थोड़े ही बेटा, उसका दंड तो भोगना ही पड़ेगा।

सिलोनसे लौटनेके बादसे ही बूढ़ीको पुराने दिनोंकी याद हो आई। वह बराबर यही सोचा करती कि उसकी सारी विपत्तिका कारण वही पाप है, जो उसके लड़कोंने ब्राह्मणके घरमें घुसकर किया था।

वह दिन-रात मरियाईदेवीकी मिन्नतें मानती, मन-ही-मन देवीसे चिरौरी-विनती करती और कहती रहती, आखिर तुम उस अभागिनी ब्राह्मणीके घर गये ही क्यों? यह बड़ा भारी पाप है बेटा!

अब बेलमपट्टीकी चेरी, या अछूतोंके टोलेमें गिने चुने केवल पांच अछूत परिवार रह गये थे। बाकी सब कहीं-न-कहीं पेट पालने भाग गये थे। चेरीका तालाब तो न जाने कबका सूख गया था। अब वे पड़ोसके एक वल्लालके खेतके कुएंसे पानी लाते थे। इसी एक कुएंमें थोड़ा पानी बचा था। पर कुएंमें वे अपने बरतन नहीं डुबा सकते थे; क्योंकि परिया-के बरतनसे कुएंका पानी अशुद्ध जो हो जाता! दिन भरके खर्चके लिए गांववालोंके पानी खींच लेने तक वे बेचारे खड़े रहते। फिर बैल छुड़ाये जाते, पानी पिलाकर नहलाये जाते और तब नालीमें बहता हुआ पानी अछूतोंको लाने दिया जाता। उस महामूल्य पानीके लिए अछूत स्त्रियों-में झगड़ा-तकरार, गाली-गलौज सभी बात हो जाती। कभी-कभी कोई औरत झगड़ेमें नाराज़ होकर सारा-का-सारा पानी गंदला कर देती और तब दूसरी औरतें किसानोंसे इसका फ़ैसला करने को कहतीं। और उसका जवाब क्या मिलता? यही कि, "छिः! अरे यही तो अछूतोंकी चाल है।"

७

कुट्टी गौंदनके लड़के खेतमें सोये थे। खेतमें कोई फसल रखानेको तो नहीं थी, मगर अधभूखे पशु, पानी सींचनेका मोट और रस्सियां थीं, जो चोरी जा सकती थीं। सुनसान रात थी। कहीं कोई आवाज नहीं

सुनाई पड़ती थी। ऊपर आकाशमें चंद्रमा झकाझक चमक रहा था। वे सूखे खेत भी चांदनीमें सुंदर ही दिखाई पड़ते थे।

अचानक कुत्ते भौंके। उधर कुएंसे कुछ लेकर पेड़की आड़में जाती हुई दूर पर परछाहीं-सी कुछ दिखलाई पड़ी।

कुट्टीका छोटा लड़का बोल उठा, कौन है? चोर, चोर!

बड़ा लड़का सेनागोडन नींदमें ही पड़ा-पड़ा पूछने लगा, क्या है?

पहला लड़का चिल्ला उठा, ओ काका, ओ रकिया, गोनडा, ओ वालती, चोर-चोर! डोल लेकर भागा जाता है। पकड़ो, पकड़ो। चोर-चोर! फिर तो सभी ओरसे मानों आसमान ही टूट पड़ा। पासके खेतसे लोग उठ पड़े और जो भी लाठी-सोटा मिला, हाथमें लेकर दौड़े। कुत्ते भी मैदान मारने भौंकते हुए दौड़ आये।

चोर तो सहज ही पकड़ा गया। चोर औरत थी। वह पानीकी चोरी करने आई थी। डोल और रस्सी लेकर आई और उसने कुएंमेंसे पानी भर लिया।

कुट्टीके लड़के चिल्ला उठे, अरे, इसने कुएंमें अपना डोल डाल दिया था, मारो सालीको! लातोंसे कचूमर निकाल दो। इसको बस, यहीं मार डालो। इसका डोल फोड़ दो। इसकी हड्डी-पसली तोड़ डालो। बदमाशने कुआं ही अशुद्ध कर डाला।

डोल तो पलक मारते ही टुकड़े-टुकड़े होगया और उस पर लात और घूंसे बरसने लगे। वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ी।

रकियाको कानूनी बातोंका कुछ पता था। वह बोला, छोड़ो-छोड़ो, देखो वह मर गई। अब मत मारो। बस, तुरंत ही एक गढ़ा खोदकर इस सालीको गाड़ दो, जिसमें फिर कोई गड़बड़ न हो।

इससे उन क्रोधांधोंको कुछ होश हुआ।

एक बूढ़ेने पूछा, यह कौन है? किसीको पता है?

कुट्टीका बड़ा लड़का बोला, यह तो कैंडी मरीकी औरत है। ऐसे तो बेचारी भली लड़की है; मगर न जाने इसने यह पाप क्यों किया?

छोटा लड़का बोला, कल हमने उन्हें बिना पानीके ही लौटा दिया था। तभी तो शैतानोंने यह बदमाशी की।

एक आदमीने कहा, बस, सब फसाद धर्मका है; सभी अच्छा है और सभी बुरा है।

एक और बोल उठा, अरे वह मरी नहीं है। बहाना किये हुए है। लगाओ न एक लात और देखो किस तरह चटसे उठकर भाग जाती है। यह कहकर उसने अपनी सलाह आप ही मान ली और उसे एक लात जमाई। बेचारी लड़की हिली तो जरूर, मगर चटसे उठकर भाग न सकी। लातों-पर-लातें बरसती रहीं, मगर वह बेहोश पड़ी रही।

रकियाने कहा, "उठाओ ससुरीको, चेरीमें फेंक आओ।"

इसपर तीन-चार आदमियोंने उसके छिटके बिखरे शरीरको बटोरकर उठा लिया और चेरीमें ले गये।

८

अगर अनाथ लड़कोंकी सच्ची कहानी लिखी जाय तो उसे पढ़नेसे लाभ ही होता है। हम सभी अभाग्यके पंजेमें नहीं पड़ते; मगर अपने-से अधिक दुःखीके अनुभवोंसे बहुत कुछ कामकी बातें सीख सकते हैं। मुकुंदनकी मांके मरनेके बादकी जीवनी बड़ी रोचक और शिक्षाप्रद होगी। मगर उसने स्वयं तो लिखी नहीं और दूसरेसे सुनी-सुनाई बातें लिखनेमें कोई रस नहीं रहता। इतना ही कहना काफी होगा कि अब वह पढ़-लिखकर डाक्टर बन गया था और कमालपुरके अस्पतालका डाक्टर था। उसने घूम-घूमकर खूब दुनिया देखी थी। अनाथ लड़कोंके भाग्यमें यह बदा ही होता है कि बहुत-कुछ भूगोल तो अपने-आप ही देखकर सीखें।

एक दिन चार हट्टे-कट्टे आदमी कंधेपर एक खटिया लिए अस्पताल आये। उन्होंने अपना बोझ सामने सहनमें धीरे-से उतारकर रख दिया। फिर वे पुकारने लगे—'सामी-सामी!' उनके स्वरमें ऐसी बात थी, जिससे लोग समझ जायं कि बाहर कोई अछूत खड़ा चिल्ला रहा है।

डाक्टर मुकुंदन् अपनी जमाखर्च बही लिख रहे थे । उन्हें अपनी सालाना रिपोर्टके लिए हिसाब जल्दी तैयार करना था । लिखते-लिखते ही डाक्टर साहब अस्पतालके नौकरसे बोले, यह क्या है मुथा ? देख आ कि कोई मुर्दा तो नहीं आया है ।

गांवके स्कूलके हेडमास्टर साहब भी टहलते हुए गप लड़ाने चले आये थे । उनसे डाक्टर मुकुंदन् बोले, जनाब पूछिए मत । यह जगह भी न जाने कैसी है कि लगभग हर हफ्ते यहां एक-न-एक खून होता ही रहता है, और मुझे मुर्दे की चीर-फाड़ करके परीक्षा करनी पड़ती है ।

हेडमास्टरने, जो तंजौर जिलेके थे, कहा, इस जिलेकी रिआया बड़ी असभ्य और झगड़ालू है । बस, बात-बात में झगड़ पड़ते हैं, और फिर मार-पीट और खून-खराबी होती ही है । जबतक इनमें प्राथमिक शिक्षाका यथेष्ठ प्रचार नहीं होता, सुधारकी कोई आशा नहीं ।

मुथा आकर बोला, मुर्दा नहीं है साहब ! एक लड़की है, जिसे लोगोंने बहुत ही मारा है ।

मुकुंदन्ने कहा, यहां टेबुलपर लानेको कहो ।

हेडमास्टरने हंसते हुए कहा, जान पड़ता है कि कोई प्रेम-कांड है ।

"हो सकता है । खैर, चलिये देखें ।"

वे लोग लड़कीको चारपाईसे उठाकर टेबुलपर लाये ।

डाक्टरने चोटोंको देखते हुए कहा, बड़ी बुरी तरह मारा है । और जगहकी चोटें तो साधारण थीं; मगर दोनों बांहोंकी हड्डियां चटक गई थीं ।

उसे लानेवालोंमें मरी भी था । वह पूछने लगा, क्या यह बच जायगी ?

मरीकी आंखोंमें आंसू भर आये । वह फिर-फिर पूछने लगा, स्वामी, यह मेरी औरत है, क्या यह जी जायगी ?

"हां-हां, यह बिलकुल अच्छी होजायगी । अस्पतालमें एक महीना रखना होगा ।"

इसपर मरी रोने लगा, हाय ! एक महीनेतक मैं कैसे गुजर करूंगा ? खानेको कहांसे लाऊंगा ?

"मूर्ख कहींका ! चुप रह । हम लोग उसे खाना देंगे, तू फिक्र न कर ।"

मरीका एक साथी बोल उठा, मरी, तुम नहीं जानते हो ? यह डाक्टर साहब हमारे अपने गांवके ऐय्या, सैनय्याके लड़के तो हैं । हमारी रक्षा करेंगे । उसे चंगा कर देंगे ।

फिर तीनों चिल्ला उठे, ना, डर क्या है, ये तो हमारे ही स्वामी हैं न ?

मरीने मुकुंदन्‌के चेहरे पर आंखें गड़ाकर देखा ।

उसने पूछा, स्वामी, क्या आप मुकुंदय्या हैं ?

डाक्टरने लड़कीकी बांहको परीक्षा करते हुए कहा, हां, हां !

हेडमास्टरने कहा, डाक्टर साहब, नमस्कार ! आज आपके हाथमें जरा मुश्किल काम आया है । इस समय बाधा देना ठीक नहीं । मैं जाता हूं ।

"अच्छा नमस्कार !!

फिर मुकुंदन्‌ने मरीसे पूछा, क्यों झगड़ा क्या था, भाई ? कहो तो, क्या बात हुई थी ?

फिर सब-के-सब एक साथ इस तरह बोलने लगे कि मुकुंदन्‌को उनकी बात समझनेमें बड़ी कठिनाई हुई ।

९

डाक्टर मुकुंदन् मन-ही-मन कह रहे थे—

यह तो आश्चर्य-जनक है । मैं जब कभी इस बेचारी लड़कीके पास आता हूं, तो मेरी माताके लगाये फूलोंकी सुगंधसे मेरा मन भर जाता है !

पाठको, क्या आपको भी कभी यह अनुभव हुआ है कि बरसों पहलेके सूंघे हुए किसी फूलकी सुगंध व बचपनके सुने हुए किसी गीतकी तान एक बार ही याद आजाती है । नाकमें मानों वह गंध भर जाती है; कानोंमें वह गीत गूंजने लगता है और मनमें उसके साथकी सारी स्मृति—सारी कथा—ताजा हो जाती है । आंखोंके आगे वह सारा दृश्य घूमने लगता है, प्राणोंमें वही बात भर जाती है ? और इसका कोई कारण भी नहीं बतलाया जा सकता ।

मुकुंदन्‌ने बड़े प्रेमसे उसके घाव धोये, कपड़ा बांधा और पट्टी ठीक करदी। फिर पूछा, कैसा जी है?

पूवी बोली, मैं बहुत अच्छी हूं स्वामी! भगवान आपका भला करें; आपको भगवान सुखी रखें!

डाक्टरको आशीर्वाद देते समय उसके मुंहसे जब ये शब्द निकले, उस समय उसकी आंखोंमें वह चमक दिखलाई पड़ी, जो माताकी वात्सल्य-दृष्टिमें होती है।

मुकुंदन् उसके पाससे जाते हुए मन-ही-मन सोचने लगे, "क्या मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूं? इस लड़कीको देखते ही मुझे मांका इतना अधिक स्मरण क्यों आने लगता है?"

"सुभा, क्या तुमने कहींसे कुछ फूल बटोर रक्खे हैं?"

"नहीं साहब, यहां कहीं फूल-फल नहीं हैं। अपने सभी फूल-पौधे तो पानी बिना सूख गये।"

मुकुंदन्‌की मां फूलोंसे बहुत प्रेम करती थी। विधवा होनेके बाद वह जूड़ेमें तो फूल लगा नहीं सकती; मगर तब भी वह फूल रोज चुनती और पूजामें रक्खा करती थी।

मुकुंदन् बार-बार अस्पतालमें पड़ी उस लड़कीकी ओर जाया करते थे।

"गजबकी बात है। मेरे दिमागसे तो उन फूलोंकी सुगंध निकलती ही नहीं। लोग कहते हैं कि जब कोई मरता है तो मरनेके साथ ही वह खतम नहीं होजाता; बल्कि उसका जन्म फिर होता है। कौन जानता है कि यह अछूत लड़की दूसरी देह में मेरी मां न हो?" ये शब्द मन-ही-मन कहते हुए मुकुंदन् उसके मुंहकी ओर बड़े गौरसे देखने लगे। वह सोई हुई थी। उसके मनमें यह खयाल जम गया। उन स्वर्गीय फूलोंकी सुगंध और भी स्पष्ट आने लगी। मुकुंदन् तो अब मानों फिरसे लड़का बन गया।

१०

प्रायः बिस्तर पर लेटनेके बाद मुकुंदन् तुरंत ही सो जाया करते थे। किसी संन्यासीसे उन्होंने यह विधि सीखी थी कि सोनेके समय आनेवाले भिन्न-

भिन्न विचारोंको किस तरह भगाकर नींद बुलाई जाय। पर आज तो उस विधिसे काम नहीं चला। उनकी आंखोंके सामने अपने बचपनके सभी दृश्य नाचने लगे। सोनेकी लाख कोशिश करने पर वे विचार पीछा छोड़ते ही नहीं थे। बिस्तरमें घंटे भर करवटें बदलते रहकर आखिर वह उठ पड़े और लैंप जलाकर पढ़ने बैठे। हाथमें गीता पड़ गई। यह प्रति किसी मित्रकी भेंट थी, जो अब ज़िंदा नहीं था। उनकी नज़र इन पंक्तियों पर पड़ी—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥

ये पंक्तियां तो अनेक बारकी पढ़ी हुई थीं; पर तो भी आज इनमें एक नया ही अर्थ झलकता था—नई ही बात मालूम पड़ती थी।

मुकुंदनने सोचना शुरू किया, हां, ठीक तो है। कैसे कोई सबल आत्मा शरीरके मरते ही अचानक नष्ट हो जायगी? ना, यह नहीं हो सकता।

सोचते-सोचते मुकुंदनको अपना भान ही नहीं रहा। उन्होंने मन-ही-मन बड़बड़ाना शुरू किया—हां, पर पुराना शरीर छोड़नेके बाद आत्मा कौन-सा नया शरीर धारण करेगी, इसका निश्चय तो केवल उसके भले-बुरे कामोंसे ही हो सकेगा। जब कभी कोई दुखी प्राणी, आदमी या पशु दिखलाई पड़े, जहांतक शक्ति हो, उसका दुख कम करनेकी कोशिश करनी चाहिए; क्योंकि कौन जानता है कि हमारा अपना ही कोई प्रिय-जन, भाई, बाप, मां, पत्नी या लड़का, जिसके लिए हम विलाप कर रहे हैं, अपने पापोंके लिए उस देहमें कष्ट नहीं भुगत रहा है? जब किसीको बहुत सुख मिले, सभी तरहके भोग मिलें, तब उससे हम ईर्ष्या क्यों करें? क्या पताकि वह हमारा ही कोई प्रिय संबंधी है, जो अपने पुण्यों-का फल भोग रहा है? अगर हम यह जान जायं, तो फिर हमारे हृदय सुखसे भर जायं, न कि ईर्ष्या से?

उन्हें पता भी न चला कि यों सोचते-सोचते वह सो गये हैं।

११

मुकुंदन्‌की मां भोजन बना रही थी। "मुकुंदन् बेटा, उठ, जल्दी तैयार हो। देख दिन कितना चढ़ आया।"

"अरे, इसमें भूल हो ही नहीं सकती। शंकाकी कहां जगह है? यह तो हूबहू बिलकुल मांका ही स्वर है। तब इतने दिनों तक यह क्यों सोचता रहा कि मां मर गई, चली गई! मां तो यहां ज़िंदा है, बुला रही है। तब तो यह एक बुरा-सा स्वप्न-भर ही था कि मां मर गई, मैंने तो इतने कष्ट उठाये, दुनिया-भरमें मारा-मारा फिरा।"

मुकुंदन्‌ने मन-ही-मन उपर्युक्त बातें कहीं। फिर वह सोचने लगा, "अहा, क्या ही आनंद है। अब मैं फिर कभी मांको छूत लगकर बीमार नहीं पड़ने दूंगा, मरने नहीं दूंगा।"

* * *

अचानक दृश्य बदलने लगा। वह किसी तरह डाक्टर बन गया; पर मां तो उसकी वही छोटे लड़केको विधवा मां बनी रही। मांने उसे पुकारा और चेरीकी ओर दौड़ पड़ी। मुकुंदन् पहले तो झिझका। समझ ही न सका कि मां क्या कहती है; पर वह तो दौड़ती ही गई। दौड़ते-दौड़ते वह आंखोंसे ओझल होगई।

वह रातको चेरीमें घुसी और लोगोंने बिगड़कर खूब मारा था, उसकी हड्डियां-हड्डियां छिटका दीं। फिर चार लंबे आदमी उसे चारपाई पर सुलाकर लाये।

* * *

दृश्य फिर बदला। इस बार वह लड़का था। वह दर्दसे परेशान चार-पाई पर पड़ा-पड़ा छटपटा रहा था। उठनेकी ताक़त नहीं थी। लोगोंने कहा कि इसे हैज़ा होगया है। उसने "मां, मां" कई बार पुकारा, मगर मां पास नहीं आई। फिर चार आदमी धीरेसे आये और बांसकी अर्थी पर उसकी मांको बांधकर उठा ले गये। वह चीखकर जाग पड़ा।

हाथसे गीता गिर पड़ी। डाक्टर मुकुंदन् आराम-कुर्सी पर लेटे-लेटे सो

गये थे। यह तो स्वप्न था। कुर्सीपरसे उठकर वह बिस्तर पर जाकर सो गये।

१२

मुकुंदन्ने पूवीकी सेवा बड़े धीरज और बड़े प्रेमसे की। एक महीनेमें वह अच्छी हुई। अब अलग होना बड़ा मुश्किल होगया।

मुकुंदन् बोले, "मरी भैया, तुमसे मुझे एक बात कहनी है।"

मरीने जवाब दिया, क्या स्वामी?

"हमारे बचपनमें तुमने मुझे बंदरके हाथसे बचाया था और बदलेमें मेरी मांसे मार खाई थी।"

मरीने कहा, हां, कोई ऐसी बात तो हुई थी; किन्तु स्वामी, वह तो बहुत पुरानी बात है। आपने तो अब मेरी औरतकी जान बचा दी है और मैं पुरानी बातें याद भी नहीं रखता।

"मरी, क्या तुम जानते हो कि लोग मरनेके बाद अपने पाप और पुण्यके फल भोगनेके लिए फिरसे जन्म लेते हैं?"

हां स्वामी, यही होता है। भगवान बहुत बड़े न्यायी हैं।"

"मेरी मांने तुम्हें बहुत तकलीफ दी थी और शायद इस पापके लिए वह कष्ट भी सह रही है। मैं उसके लिए कुछ प्रायश्चित्त करना चाहता हूं। मां-बापके पापोंके लिए प्रायश्चित्त करना तो बेटेका धर्म ही है। क्या तुम और तुम्हारी पत्नी मेरे साथ मेरे भाई-बहन बनकर रहोगे? तुम्हारे लिए तो ये दिन मुश्किलके हैं ही, और मैं तुम्हारा पालन सहज ही कर सकता हूं।"

"यह कैसे होगा स्वामी? अगर काम दीजिए तो मैं काम कर सकता हूं; पर भला हमारे जैसे अधम पशु स्वामीके भाई-बहन कैसे होंगे?"

"यह सच है मरी, कि कभी-कभी तुम लोगोंके साथ कुत्तोंके समान या उससे भी बुरा व्यवहार होता है। पर हम लोग यह बड़ा भारी पाप कमा रहे हैं।"

"मैं ये सब बातें नहीं समझता, मैं तो मूरख अछूत हूं स्वामी!"

मुकुंदन्‌ने ज़ोर देकर कहा, खैर, तुम्हें, तुम्हारी स्त्री और मांको मेरे साथ ही रहना होगा।

मरी हँसते हुए बोला, मेरी मां! ना स्वामी, ना, वह इस तरह नहीं फंसेगी!

६

जगदीश शास्त्री का सपना

१

जगदीश शास्त्री सन् १८६०में बैरिस्टर परमशिव शर्माके रसोइया होकर रंगून गये थे। वहां पांच वर्षमें ही मि० शर्माकी वकालत खूब चल निकली। वह रंगूनके एक प्रमुख वकील होगये। जैसे-जैसे उनकी वकालत चमकती गई, वह विलायती रंग-ढंग अपनाते गये। सन् १६००में उन्होंने एक परिया (अंत्यज) रसोइया भी रख लिया। जगदीश शास्त्रीको अब छुट्टी मिल गई। मि० शर्मा एक सज्जन पुरुष थे। जगदीश शास्त्रीको वह बतौर पेंशनके बराबर पूरा वेतन देते रहे। अपने देशमें वह अब भी 'शर्माके रसोइया' ही कहे जाते थे।

जगदीश शास्त्री पुरोहित-परिवारके थे। थोड़ा-बहुत मंत्रोच्चारण और कर्मकांड तो उन्हें पहलेसे ही आता था। अब उन्होंने एकाध छपी पुस्तक-से कुछ काम-चलाऊ श्लोक तथा मंत्र और रट लिये। रंगूनमें अब वह पुरोहिताई करने लगे। इस व्यावसायसे उन्हें अच्छी आमदनी हुई। पैसा जमा हुआ तो साहूकारी सूझी। सूद पर रुपया चलाने लगे। लोगोंका तो यह भी कहना था कि जब वह बैरिस्टर शर्माके रसोइये थे, तभी उन्होंने काफी पैसा इकट्ठा कर लिया था। खैर, कुछ भी हो, सन् १६०६ तक वह एक धनी आदमी बन गए। प्रवाद तो यहां तक था, कि उनका एक लाख रुपया बैंकमें जमा है। पर कुछ लोग इसे अत्युक्ति ही मानते थे।

जगदीश शास्त्री अबतक कुंआरे ही थे । जब उन्होंने बैरिस्टर शर्मा-की नौकरी छोड़ी, तब ४३वां वर्ष पार कर चुके थे । पुरोहिताई आरंभ करनेके समयसे ही उनके मनमें विवाहके विचार उठने लगे थे; पर कारण जो भी रहा हो, उनका विचार विचार ही रहा; विवाह हुआ नहीं। सन् १९०९में जगदीश शास्त्री भारत लौट आये और तंजौर जिलेमें उन्होंने कुछ जमीन-जायदाद खरीद ली । अब वह ५३ वर्षके होगए थे । विवाह-का विचार छोड़ दिया था । अपनी जायदादका उत्तराधिकारी बनानेके लिए वह एक लड़का गोद लेना चाहते थे, जो मरनेके उपरांत उनका विधि-विहित अग्नि-संस्कार कर सके । शास्त्रोंमें लिखा है कि पुत्र-विहीन व्यक्ति घोर नरकगामी होता है ।

२

इस वर्ष कुंभकोणम्में महामाघका मेला लगनेवाला था । जगदीश शास्त्री मेलेकी प्रतीक्षामें थे । कुंभकोणम्में वह पूरे एक सप्ताह रहे । मेले-में काफी भीड़ थी । इस भीड़में, दैवयोगसे, एक कुलीन परिवारके संपर्कमें आनेके कारण जगदीश शास्त्रीकी जीवन-धारा दूसरी ही दिशामें पलट गई ।

अपनी तीन रूपवती कन्याओंके साथ नागेश्वर ऐयर महामाघके मेले-में आये थे । उन्होंने जगदीश शास्त्रीको अपनी ओर आकर्षित कर लिया। नागेश्वरराव अपनेको जौहरी और बीमा कंपनीका एजेंट बताते थे । वह उत्तरी आरकटके रहनेवाले थे । उत्तरी भारत और कलकत्तामें वह एक अर्से तक रह चुके थे । उनकी दो पुत्रियोंका तो विवाह हो चुका था; पर तीसरीका बाकी था । ५३ वर्षके होने पर भी जगदीश शास्त्री पूर्णतः स्वस्थ और बलवान थे । नागेश्वर ऐयरकी दृष्टिमें वह ३८ या अधिक-से-अधिक ४० वर्षके-से जचते थे । बालिका १४ वर्षकी थी । और थी भी बड़ी सुंदरी । पेशेवर बजवैयेकी तरह वह बेला बजा सकती थी ।

खैर, सब बातें तय होगई । नागेश्वर ऐयरसे कलकत्ताकी एक बीमा कंपनी ६०००) का तकाजा तुरंत कर रही थी । तय हुआ, कि जगदीश शास्त्री

यह रुपया चुका दें और बिना किसी भारी बाजे-गाजेके तिरुपतिमें विवाह तत्काल कर दिया जाय। कारण यह था कि नागेश्वर ऐयरको फौरन कलकत्ते जाकर बीमा-कंपनीके दफ्तरमें अपनी उपस्थितिकी सूचना देनी थी। अस्तु, रुपया चुका दिया गया और विवाह होगया। जगदीश शास्त्री सपत्नीक रंगून लौट गये। कौन जानता था कि इस उतरती अवस्थामें बेरिस्टर शर्माके बूढ़े रसोइयेका विवाह एक परम रूपवती बालिकाके साथ हो जायगा!

विवाहके दो वर्ष पश्चात् जगदीश शास्त्रीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम रामचंद्र रखा गया। शास्त्रीजीका तो वह सर्वस्व था। कोई दो साल तक तो पत्नीको अपने पतिदेव पर श्रद्धा-भक्ति रही; पर उसके बाद उसके कुलटापनकी खबर उड़ते-उड़ते शास्त्रीजीके कानों तक पहुंची। फिर तो दिन दूनी रातचौगुनी बदनामी फैलने लगी—और सन् १६१८ में अपना प्रिय बेला, बहुतसे जवाहरात और नकद रुपया लेकर श्रीमतीजी वृद्ध पतिदेवको मंझधारमें अकेला छोड़ कर चलती बनीं।

लड़का अब सात सालका होगया था और स्कूलमें पढ़ रहा था। जगदीश शास्त्री अपने प्यारे बच्चेके पालन-पोषणमें इतने तन्मय हो गये कि धीरे-धीरे उन्हें अपनी प्राणवल्लभाका वियोग विस्मृत होगया। अपने कुछ खास-खास यजमानोंके घरों पर वह अब भी पुरोहिताई करते थे। इससे भी उन्हें घरेलू दुःखोंके भूल जानेमें बहुत सहायता मिलती थी। लड़का कुशाग्रबुद्धि था। एकके बाद एक परीक्षा पास करता जाता था। एक मुद्दतके बाद, सन् १६३० में जगदीश शास्त्री फिर भारत आये। रामचंद्र इस समय १६ वर्षका था। कलकत्तेसे वह बी० ए०की परीक्षा पास कर चुका था।

जगदीश शास्त्रीके एक ममेरे भाई थे। उनका लड़का मद्रास का एक प्रमुख वकील था। आशा की जाती थी कि साल-छः महीनेमें वह एडवोकेट जनरलका पद पा जायगा। वकील साहबका नाम सी० वी० सीतारामैयर था। उनकी स्त्रीने जब जगदीश शास्त्रीके लड़केको देखा,

उसी द्वारा मनमें निश्चय कर लिया कि वह अपनी पुत्री पार्वतीका विवाह उसी सुंदर नवयुवकके साथ करेगी। लड़का रूपवान है, बी० ए० पास कर चुका है और आई० सी० एस०के लिए इंग्लैंड भेजा जा सकता है। क्या ही अच्छा हो कि यह सुंदर संबंध अभीसे पक्का हो जाय!

श्रीमती सीतारामैयरका प्रस्ताव सभीने पसंद किया। कठिनाई थ तो केवल एक। कमबख्त 'सारदा कानून' बाधक था। बालिका पार्वती अभी मुश्किलसे ग्यारह वर्षकी थी। यदि भावी एडवोकेट जनरल ही कानून तोड़ने लगें तो उनके लिए यह बड़ी बदनामीकी बात होगी; पर श्रीमतीजी अपने विचार की इतनी दृढ़ थीं कि उन्हें ऐसे वाहियात कानूनकी रत्ती-भरभी परवा न थी। उन्होंने किसी देशी राज्यमें जाकर विवाह करने-का प्रस्ताव किया। पहले तो वकील साहबको पत्नीका प्रस्ताव कुछ पसंद आया; पर दुर्भाग्यवश उसी शामको यह खबर क्लबघर तक पहुंच गई।

मिस्टर पनिक्करने आश्चर्यपूर्वक पूछा—सुना है, आप अपनी लड़की-के विवाहके लिए पुद्दुकोटा जा रहे हैं?

श्री सीतारामैयरने कहा—"नहीं जी, इस बाजारू गप्पमें सार नहीं है।" इस जोरदार इंकारसे उनका कानूनी अंतःकरण उस प्रस्तावके विरुद्ध होगया।

श्रीमतीजी अब भी अपनी हटपर डटी हुई थीं। "क्या हम इतने मूर्ख हैं कि तुम्हारे इस नये और बेहूदे कानूनके कारण एक अच्छे जामातासे हाथ धो बैठें?"

"तो क्या हुआ, और भी तो बहुत-से योग्य लड़के हैं।"

दृढ़ निश्चयी महिलाने कहा—"बुद्धिको न ठुकराओ। इस लापरवाही और कोरी बातोंसे अब काम न चलेगा।"

"अच्छा, तो तुम आखिर चाहती क्या हो?"

"मैं यह चाहती हूं कि सगाई तो लिखा-पढ़ी कर अभीसे पक्की करली जाय और हमारे खर्चसे लड़का आई० सी० एस०के लिए इंग्लैंड भेज

दिया जाय। फिर तीन वर्षके बाद पार्वतीका विवाह किया जाय। यह कैसा रहेगा?"

यह नवीन प्रस्ताव सर्वथा व्यावहारिक था। जगदीश शास्त्रीने बड़े उल्लासके साथ इस मांगलिक प्रस्तावका स्वागत किया। इसे कार्यान्वित करनेके लिए जो कुछ भी किया जा सकता था, सब किया। सगाई पक्की होगई। नवयुवक रामचंद्रको छोड़ बाकी सभी इस संबंधसे प्रसन्न थे। बात यह थी कि पार्वतीकी मुखाकृति उसे पसंद न थी; किन्तु यह देखकर कि पिताजीने इस विषयमें अपना मत स्थिर कर लिया है, उसे चुप रह-जाना पड़ा। इसके अतिरिक्त इंग्लैंड जाकर आई० सी० एस० पास करने-का विचार तो प्रलोभनकारी था ही।

३

वृद्ध जगदीश शास्त्री पुनः रंगून लौट गए। इंग्लैंडमें रहते हुए रामचंद्रको दो वर्ष होचुके थे। शास्त्रीजी बिल्कुल अकेले थे। यह एकांत-वास उन्हें खलने लगा। चित्त बरबस उसी रमणीकी ओर चला जाता था जो किसी समय उनकी हृदयेश्वरी थी और उनके प्यारे बेटेकी माता। वह जैसे भी रहना चाहती, उनके साथ बनी तो रह सकती थी। भागनेकी ऐसी क्या ज़रूरत थी। देखा जाय तो रंगून जैसी जगहमें लोकापवादका मूल्य ही क्या? हां, जहां चालीस वर्षतक रहनेपर भी आप एक मुसाफिर ही बने रह सकते हैं। मान लिया जाय कि वह लौट आये, तो क्या वह उसे अपने घरमें वैसे ही पत्नी-रूपमें रख लेंगे? यह तो टेढ़ी खीर है। यह न होगा। पर फिर ज़रा सोचकर उन्होंने मनमें कहा, हर्ज ही क्या है? यह कोई अनहोनी बात तो होगी नहीं। प्राचीनकालमें अहल्या, तारा आदि देवियोंके संबंधमें क्या ऐसा ही नहीं हुआ था?

इस प्रकार अकेले सोचते-सोचते उनका चित्त घूमने-सा लगा। चित्त-भ्रम होजनेके कारण वह अपनेको रुग्ण समझने लगे। सलाह लेने पर डाक्टरने समझाया—"कोई ऐसी चिंताकी बात नहीं है; लेकिन तो भी आपका भारत चला जाना अच्छा ही होगा। आखिरकार यह हमारा देश

तो है नहीं ! आप वृद्ध भी होगए हैं। तो फिर इस अवस्थामें अपने ही गांव में अपने ही लोगों के बीच क्यों न रहा जाय ? पैसा भी आपके पल्ले है। उधर आपका पुत्र विलायतसे आई० सी० एस० होकर लौटनेवाला है।" आदि जगदीश शास्त्रीको डाक्टरकी सलाह सोलह आने जच गई। उसी सप्ताह वह मद्रासके लिए रवाना हुए। सदाकी भांति उन्होंने डेकका ही टिकिट लिया। तीसरे दरजेमें जब वह खूब आरामसे सफर कर सकते थे, तब ऊंचे दरजे पर फिजूल पैसा क्यों बहाया जाय ?

सेकेंड क्लासके एक यात्रीको देखकर उन्हें कुछ आश्चर्य हुआ। हे ! यह उनकी खोई पत्नी तो नहीं है ? है तो वैसी ही। थोड़ा ही अंतर मालूम पड़ता है। सूरत-शकलमें इतनी अधिक समानता अकस्मात नहीं होसकती ! अब वह हर घड़ी उस महिला पर निगाह रखने लगे। समुद्र-यात्राके आखिर दिन तो उन्हें बिलकुल यह निश्चय होगया कि वह स्त्री उनकी भूतपूर्व पत्नी ही है। कुलियोंसे जब वह महिला अपना आखिरी बंडल उठवाने लगी तो जगदीश शास्त्री उसके सामने आकर खड़े होगये। एक क्षण तो एक दूसरेकी ओर देखकर दोनों कुछ झिझके। फिर स्त्रीने कहा—"क्या आप मुझसे मिलना चाहते हैं ? तो अगप्पा नायक स्ट्रीटके ११४ नंबर वाले मकान पर आकर मिलें।" "बहुत अच्छा" जगदीश शास्त्रीने कहा—"तब तुम वही हो !"

"हां मैं वही हूं।" उसने हंसकर कहा।

४

जगदीश शास्त्री सीधे सीतारामैयर वकीलके बंगले पर गये। श्रीमती सीतारामैयरने भावी समधीका स्वागत सत्कार करनेमें कुछ उठा नहीं रक्खा।

उन दिनों हरिजनोंके मंदिर-प्रवेशकी आवाज चारों ओर गूंज रही थी। जहां-कहीं वह जाते, लोगोंकी चर्चाका यही विषय होता "सनातन-धर्म रसातलको चला गया"—उनके मित्र कहते और जगदीश शास्त्री स्वयं भी यही अनुभव करने लगे।

"आप लोगोंने 'सारदा-कानून' क्यों पास होने दिया ? उसीका तो यह नतीजा है।" श्रीमती सीतारामैयरने कहा।

"क्यों व्यर्थ बकती हो ! उसका इस प्रश्नसे क्या संबंध है ?" मिस्टर सीतारामैयरने कहा।

"सनातनी प्रथाएं तोड़नेवालोंको आपने ही तो प्रोत्साहित किया।"

"यह जो कहती हैं उसमें बहुत-कुछ तथ्य है।" जगदीश शास्त्रीने श्रीमतीजीका समर्थन किया।

"रंगून जाकर प्राचीन प्रथा तोड़नेका श्रीगणेश किसने किया ?" ऐयर साहबके दफ्तरके एक नटखट नौजवान वकीलने व्यंग कसा।

"इन बातोंसे क्या फायदा ? जीविका-निर्वाहके लिए रंगून क्या इंग्लैंड तक जाना एक बात है और हमारे मंदिरों पर इस प्रकार दुष्टता और लंपटताके साथ आक्रमण होना दूसरी बात है। क्या इन दोनों बातोंमें कुछ भेद ही नहीं ?" जगदीश शास्त्रीने बड़े तपाकसे जवाब दिया।

"कुछ भी हो। शास्त्रोंमें चार ही वर्णोंका उल्लेख है न ? आपके रचे 'पंचमवर्ण'के लिए क्या प्रमाण हैं ? अपने व्यवसायकृत अथवा कर्मणा वर्णके अनुसार ही इन लोगोंसे क्यों न व्यवहार किया जाय ?" उसी नौजवान वकीलने पूछा।

"अधूरा ज्ञान अत्यंत भयावह होता है। आपने दो-चार धर्म-पुस्तकोंके अंग्रेजी अनुवाद पढ़ लिये हैं, और बातें ऐसे प्रकांड पांडित्यकी बघारते हैं, मानों संस्कृत-साहित्यका सागर ही आप पी चुके हैं। बलिहारी ! सुनिए, सृष्टिके आरंभमें चार ही वर्णोंकी रचना हुई थी। तत्पश्चात एक वर्ण दूसरे वर्णमें मिल जानेसे वर्णसंकरोंके वंश चले। ऐसे ही 'प्रतिलोम' संबंधोंसे यह चांडाल जाति उत्पन्न हुई है। समझे ?"

"तो क्या शास्त्रीजीका यह अभिप्राय है कि ईश्वरकी वर्ण-रचनामें मूलमें ही भूल थी ? तब तो परिया, चकली और पल्ला, सभी उच्चजातीय ब्राह्मण-माताओंकी संतति हैं। क्या हमारी पितामही इतनी पतित थीं ?" नौजवान वकीलने पूछा।

"आज हम इन सब बातोंका विश्लेषण नहीं कर सकते । सभी स्मृतियां एक स्वरसे समर्थन कर रही हैं कि प्रतिलोमज संतति चांडाल है । जो बातें वंशानुक्रमसे चली आरही हैं, उन्हें सिद्ध करनेके लिए आप हमसे कदापि नहीं कह सकते ।"

सीतारामैयरकी कठोर मुखाकृतिके प्रति आत्मसमर्पण करते हुए नौजवान वकीलने कहा—"शास्त्रीजी, कठिनाई तो यह है कि सुधारक लोग कानून बनवाना चाहते हैं । वैसे सुधार और समझौतेके कार्यमें हमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए ।"

"जरा भी नहीं । उनकी उन्नतिके लिए उन्हें आर्थिक तथा अन्य सहायतायें दी जायं, इस पर कौन आपत्ति करेगा ? आपत्ति तो भाई हमें सुधारकोंके धार्मिक हस्तक्षेप पर ही है ।" जगदीश शास्त्रीने कुछ शांतिके साथ कहा ।

"धर्मकी क्या परिभाषा है शास्त्रीजी ?" उसी नवयुवक वकीलने पुनः मानसिक संशयमें पड़ते हुए पूछा ।

"बस, रहने दो ।" सीतारामैयरने कहा—"दस बजने वाले हैं । हमें कचहरी भी तो जाना है । दर्शन-शास्त्र पर बादको काफी बहस हो सकती है ।"

५

सीतारामैयर और उनके जूनियर वकील जब हाईकोर्टको रवाना हो गये, तो जगदीश शास्त्री भी ११४, अगप्पा नायक स्ट्रीटकी ओर चल दिये ।

* * * *

टिकट-घरके पास खड़े जगदीश शास्त्री काशीका टिकट ले रहे थे । वह वहां उम्रमें जैसे दस साल बड़े दीखते थे ।

"दादाजी, आप किस मार्गसे जाना चाहते हैं ?" टिकट-बाबूने पूछा ! इस 'दादाजी'के संबोधनसे आजतक उन्हें किसीने नहीं पुकारा था । लोग तो उन्हें "काका" कहा करते थे, दादा या बाबा नहीं । आखिर निगोड़ी वृद्धावस्था आ ही गई । एक दिन तो दादाजी बनना ही था । वही हुआ भी ।

"अजी, कोई भी मार्ग हो ! नजदीकसे नज़दीक मार्गका टिकट दीजिए

जिससे जल्दी ही पहुँच कर काशीमें अपने पापोंका प्रायश्चित्त कर डालूं।"

११४, अगप्पा नायक स्ट्रीटमें रहनेवाली महिलासे जगदीश शास्त्री मिले थे। वह उनकी पत्नी निकली। पर क्या ही विचित्र रहस्य खुला! सत्य सदा कल्पित कहानीसे भी अधिक आश्चर्यजनक हुआ करता है।

गायब हो जानेवाला वह जौहरी और बीमा-कंपनीका एजेंट—शास्त्रीजीका वह फर्जी ससुर—न तो ऐयर ही था, न जौहरी ही! वह तो तिरुवलूरका रहनेवाला नागनाई था। त्यागराजा ऐयरके साथ वह कलकत्ते चला गया था और वहीं बस गया था। वहां उसकी हजामतकी दूकान खूब चल निकली और वह एक ब्राह्मण युवतीके साथ बड़े आनंदसे रहने लगा। यह युवती विधवा थी और आश्रय-हीन। इसीसे कुकर्मोंमें फंस गई। उससे नागके तीन बच्चे हुए। जगदीश शास्त्रीकी पत्नी सबसे छोटी लड़की थी। वह नागनाई अब भी जीवित था और जाल-साजीके अपराधमें लाहौर जेलमें लंबी सजा काट रहा था।

रंगूनसे चंपत होकर वह नाटक-थियेटरवालोंके साथ काफी घूमी और अब एक फिल्म कंपनीमें नौकरी करली थी। सावित्रीका अभिनय करने वह मद्रास आई थी। खूब धन-संपन्न और सुखी होनेके कारण उसे अब किसीकी सहायताकी दरकार न थी। लोक-निंदासे बचनेके लिए जगदीश तो अब भी उसे एक भारी रकम देनेको तैयार थे। पर ईश्वरने उन पर अनुग्रह किया, क्योंकि इसप्रकारके विचार उनकी पत्नीके मनमें ही नहीं आये।

"मैंने तुम्हें धोखा दिया है। प्रभु मेरे पिताको क्षमा करें। अब तुम सीधे काशी जाओ। दयामयी गंगामाता तुम्हारे बुढ़ापेके पापोंको धो दे।" पत्नीने कहा।

वृद्ध जगदीश शास्त्री बच्चेकी तरह फूट फूट कर रोने लगे और उनकी भूतपूर्व पत्नी अपनी साड़ीके अंचलसे उनके आंसू पोंछने लगी।

"यह वाहियात वर्ण विभाग किसका रचा हुआ है? यह सब माया

है। यह ब्रह्माकी नहीं, मनुष्यकी रचना है।" अपनी पुनः-प्राप्त पत्नीका प्रेमालिंगन करते हुए जगदीश शास्त्रीने कहा।

पत्नीने हंसकर कहा —"यह अब कैसे हो सकता है? तुम्हारे स्पर्श-के योग्य मैं नहीं रही। मेरे सिर पर लदे हुए पापोंकी बाढ़ तुम्हारी दस पीढ़ियोंको भी बहा देनेके लिए काफी है।"

वृद्ध शास्त्री झिझक कर पीछे हट गए। नाटक और फिल्म कंपनियां! इनके विषयमें वह बहुत-कुछ सुन चुके थे। इस प्रकार अपने दोष स्वीकार करनेमें उसने कोई अत्युक्ति नहीं की। उन्हें विलायतमें पढ़ते हुए अपने पुत्र रामचंद्रकी याद आई। हां, दो मासमें वह लौट आयेगा। और, तब सीतारामैयरकी कन्याके साथ उसका विवाह होगा। यह बात संसारमें अगर कहीं फैल गई कि यह लड़का एक जाति-हीनाका पुत्र है तो फिर विवाह होना असंभव हो जायगा। वह किस वर्णका माना जायगा? सीतारामैयरकी पत्नी क्या ऐसे वर्णसंकरी विवाहकी अनुमति देदेंगी? कदापि नहीं। सीढ़ियोंसे उतरते हुए उन्हें ऐसा लगा मानो उनका सिर फट रहा है। रेलिंगको थामे हुए वह लड़खड़ा रहे थे।

६

रेलगाड़ी जगदीश शास्त्रीको तूफानकी चालसे काशी लिये जा रही थी। ट्रेनमें यह उनकी दूसरी रात थी। गहरी नींदमें खूब खर्राटे भर रहे थे। साथके मुसाफिरोंने उनकी वृद्धावस्था पर तरस खाकर उन्हें लेटने और सोनेके लिए जगह देदी थी। उस समय वह एक भयानक स्वप्न देख रहे थे।

उनका प्रिय पुत्र विलायतसे वापस आगया था; पर आई० सी० एस० होनेके बजाय वह एक परिया (अछूत) होगया था। कैसा विचित्र रूपांतर था? किंतु जगदीश शास्त्रीकी वात्सल्यपूर्ण दृष्टिमें वह अब भी पहले ही की तरह दुलारा रामचंद्र था। उसे साथ लिये वधू और नौकरीकी खोजमें वह जहां-तहां बावलेसे घूम रहे थे।

सीतारामैयर और उनकी स्त्रीने उन्हें मकानसे निकाल बाहर किया।

वहांके माली, मेहतर, ड्राइवर आदि सभी दांत पीस-पीसकर चिल्लाते हुए उस अभागे बूढ़े और उसके लड़केका पीछा कर रहे थे। इतनेमें भीड़ जमा होगई। स्वप्नका दृश्य बदल गया।

अब वह अपनी जन्मभूमिमें थे। रिश्तेदारोंको जब पता चला कि उन्होंने एक परिया-पुत्र छिपा रखा है, तो उन लोगोंने भी जगदीश शास्त्रीको निकाल बाहर किया। वह पुनः मद्रास गये। वहां वह एक मोटर-बस पर सवार हुए। कंडक्टरने पूछा—"यह लड़का कौन है?' गलेमें रुद्राक्षकी माला धारण किये एक वृद्ध ब्राह्मणने कहा—'अरे, यह तो चांडाल है।' बसमें बैठे हुए लोगोंके साथ एक मुसलमान भी चिल्लाने लगा—'निकाल दो इसे—इस चांडालको!' उन्होंने बलपूर्वक लड़केको उतार दिया। वृद्ध पिताको भी बसमें से कूदना पड़ा। शर्मके मारे दोनों एक गलीमें भाग गए।

दृश्य फिर बदला! "क्या आप मेरे लड़केको अपने दफ्तरमें बतौर क्लर्कके रख लेंगे?" जगदीश शास्त्रीने सीतारामैयरसे पूछा। मैलापुरमें सीतारामैयरके कमरेका यह दृश्य था।

"यह कैसे हो सकता है? मेरी पत्नीको तो आप जानते ही हैं, वह कैसे राजी होंगी?" सीतारामैयरने धीरेसे कहा।

इतनेमें श्रीमतीजी आफिस-रूममें आ धमकीं। मारे भयके जगदीश शास्त्री कांप उठे।

"क्या आप चाहते हैं कि एक नीच परिया हमारे दफ्तरमें बैठकर चीजें छुआ करे?" श्रीमतीजीने आग बबूला होकर कहा।

"नहीं, नहीं—मेरा यह मतलब नहीं है। मैं यह सोच रहा था कि कचहरीके समय वह श्रीमान् सीतारामैयरकी हाजिरी बजावे और उसके बाद उसे छुट्टी मिल जाया करे। आपके मकान पर तो आनेकी आवश्यकता ही नहीं।"

"हमें ऐसे नौकरकी जरूरत ही नहीं। हमारा रुपया लौटा दो"—कहते हुए उस कर्कशाने एक इकरारनामा सामने रख दिया।

केम्ब्रिजमें रामचंद्रकी पढ़ाई पर सीतारामैयर अबतक पंद्रह हजार रुपया खर्च कर चुके थे। जिस विवाहकी प्रतीक्षामें इतनी भारी रकम खर्च की गई थी, वह अब असंभव था। स्वप्न इतना स्पष्ट था कि इक-रारनामेमें लिखा एक-एक शब्द जगदीश शास्त्री ज्यों-का-त्यों पढ़ सकते थे।

* * *

फिर दृश्य बदला। अब एक महान् मठाधीशके सामने शास्त्रीजी अपने पक्षका जोरोंके साथ समर्थन कर रहे थे। मृग-चर्म पर सन्यासीजी महाराज विराजमान थे और उनके हाथमें एक दंड था।

"स्वामीजी! मेरे इस परिया पुत्रको क्या आप कृपाकर किसी तरह ब्राह्मण न बना देंगे?"

"असंभव!" गेरुआ वस्त्रधारी उस मठाधिपतिने बड़े ही कठोर स्वर-में उत्तर दिया—"अपना वर्तमान शरीर भस्मसात् करके पुनर्जन्म लेने-के अतिरिक्त और किसी उपायसे चांडाल 'शरीर-परिवर्तन' नहीं कर सकता। हां, अपने कुल-धर्मके अनुसार यथोचित कर्म करते हुए वह उससे अच्छा शरीर पा सकता है; किंतु ब्राह्मण-वर्ण प्राप्त करने तक तो उसे कई जन्म लेने पड़ेंगे।"

"पर तुमने तो कई जन्म ग्रहण नहीं किये। इसी जन्ममें, इसी शरीर-से, तुमने कितने पाप किये हैं। विश्वासघात तुमने किया, धोखा तुमने दिया, झूठ-फरेब तुमने रचे।" क्रुद्ध जगदीश शास्त्री एक ही सांसमें बकते गये।

"नाश हो तेरा, नराधम! मेरे गृहस्थाश्रमकी गन्दी बातें उखाड़ रहा है।" मठाधीशने चिल्लाकर कहा और वृद्ध शास्त्रीके सिर पर एक दंड जमा दिया।

* * *

जगदीश शास्त्री लुढ़ककर नीचे आ गिरे। आंख खुलने पर देखते क्या हैं कि सब-के-सब मुसाफिर ठहाका मारकर हंस रहे हैं।

एकने कहा—"बूढ़े दादाके सिरमें जरूर चोट आ गई है।" "नहीं तो,"

दूसरे यात्रीने कहा—"सौभाग्यसे उनके सिर पर अंगोछा लिपटा हुआ था।"

७

दूसरी रातको भी उन्होंने वैसा ही भयानक स्वप्न देखा। कुछ स्वप्न तो बहुत ही मामूली होते हैं और उनकी असारताका पता स्वप्नमें ही चल जाता है; पर कुछ स्वप्न इतने भयंकर होते हैं कि वह हूबहू सच मालूम होते हैं। जगदीश शास्त्रीका स्वप्न इसी प्रकारका था। वह वास्तविकता लिए हुए अत्यंत डरावना स्वप्न था। हिलते हुए पेड़ कानाफूसी करते—'चांडाल!' चिड़िया चुहचुहाती—'चांडाल!' घरघराते हुए रेलगाड़ीके पहिये भी कहते 'चांडाल-चांडाल'।

"आप दिल्ली जारहे हैं, तो क्या आप वहां इस गरीब लड़केको नौकर न रख लेंगे? लड़का पढ़ा-लिखा है। बी० ए० पास कर चुका है। क्या कहूं, एक दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटनासे यह कम्बख्त लड़का परिया होगया।"

"नहीं," रायबहादुर नरसिंहाचार्यने कहा—"यह सच है कि दिल्लीमें रहते हुए हम लोग वर्णाश्रम-धर्मका पूरे तौर पर पालन नहीं करते। फिर भी इस लड़केको मैं अपने घरमें कैसे रख सकता हूं? कोई शूद्र लड़का होता तो उसे मैं रख भी लेता। यह तो परिया है। इसका रखना तो एक आफत है, एक बला है।"

जगदीश शास्त्रीने उत्सुकतापूर्वक पूछा—तो क्या मैं इसे एक शूद्र लड़केमें बदल दूं?

"हां, ज़रूर।" रायबहादुर आचार्यने कहा।

शास्त्रीजी अपने स्वप्नके पुत्रसे बोले—"बदल जाओ बेटा, शूद्र हो जाओ।"

परंतु ऐसा होना तो असंभव था।

"मैं शूद्र कैसे हो सकता हूं।" लड़केने विरोध करते हुए कहा—"मैं तो चांडाल हूं। मेरी नसों में नाई और ब्राह्मणका रक्त है। दोनों रुधिर एक दूसरेका विरोध करते हुए मेरी नाड़ियोंमें बह रहे हैं। तुम्हींने तो

स्वयं कहा था कि इस प्रकारके वर्ण-सांकर्यसे उत्पन्न संतान चांडाल होती है।"

"सत्य है, सत्य है। हे दयालु प्रभो! क्या ही अच्छा हो कि ये हत्यारे शास्त्र भस्म हो जायं।"

"पिताजी मैं अब रेलका कुली बन जाऊंगा। वहां मुझे कोई सताने न आयेगा।" रामचन्द्रने कहा।

"बेटा, यह भी प्रयत्न कर देखो।" वृद्ध पिताने कहा।

पहला काम यह मिला कि साफ-सुथरे कपड़े पहने एक सज्जनने बहुत हल्केसे बक्सको मुसाफिरखाने तक लेजानेके लिए रामचंद्रको चार आने दिये। इसके बाद उसे एक ब्राह्मण और उसकी स्त्रीका सामान लेजानेको मिला। असबाबमें एक बिस्तर, एक भारी ट्रंक और कपड़ोंका एक बंडल था। सामान सिरपर संभालकर वह चलने ही वाला था कि एक नटखट लड़केने चिल्लाकर कहा—"ऐयर, ऐयर! यह कुली तो परिया है!"

भयभीत अफसर और उसकी स्त्रीने डांटकर पूछा—"क्यों रे लड़के, तू परिया है?"

बेचारे नये कुलीने कांपते हुए जवाब दिया—"हां सरकार!" "ओ पाजी, फिर तूने मेरा सामान छूनेका साहस कैसे किया?" क्रुद्ध महिलाने चिल्लाकर कहा।

सारा सामान वहीं फेंक कुली लड़का बुरी तरह भागा। शास्त्रीजी उसके पीछे।

पिता-पुत्र फिर इधर-उधर चक्कर काटने लगे। बेचारा रामचंद्र अब तो साक्षात् चकली (मद्रासकी एक अछूत जाति) लड़का होगया! वृद्ध शास्त्रीके पैर दुख रहे थे और प्यास के मारे उनका गला सूख रहा था; पर पानीकी तो कहीं एक बूंद भी न थी।

"बेटा रामचंद्र, कहींसे जल लाओगे? मैं अत्यंत प्यासा हूं।" वृद्ध पिताने कहा।

"किसीसे मांगू क्या ?" लड़केने पूछा—"पर लोग एक चकली लड़केको पानी क्यों देने लगे ?"

"हाय मेरे लाल, तुम ठीक कहते हो। लोग तुम्हें न तो पानी ही देंगे, न खाना ही; क्योंकि वे सब तुम्हारी छाया पड़नेसे ही अपवित्र होजायंगे।"

"पिताजी आइये, इस तरह कलप-कलपकर मरना ठीक नहीं। चलिए, विलायत चलें, वहांके दयालुनिवासी इस भांति किसीको भूखा-प्यासा नहीं मरने देते।"

"पर वहां हम कैसे जा सकते हैं ? विलायत तो यहांसे हजारों कोस है। बेटा, हम तो अभी इस तिरुवलूरमें ही पड़े सड़ रहे हैं।"

"अरे देखो, पास ही तो तालाब है। चलो, वहां चलकर प्यास बुझा लें।" डरसे कांपते हुए वे तालाबकी सीढ़ियों तक गये। उस सुंदर सरोवर पर उस समय और कोई नहीं था। जी भरकर बाप-बेटेने पानी पिया। बेचारे लौट ही रहे थे कि एक वृद्धा ब्राह्मणी आकर चिल्लाने लगी—"अरे, इस परिया लड़केने सारा तालाब अपवित्र कर दिया! हाय, बिना जलके अब हमारा काम कैसे चलेगा ?"

लड़केके चारों ओर क्रोधान्मत्त लोगोंकी भीड़ जमा होगई।

"भाई यह मेरा लड़का है, यह मेरा सगा लड़का है। परिया नहीं है। इसे मत मारो।" जगदीश शास्त्रीने अपने पुत्रकी ओरसे कहा।

"प्रमाण दो इस बातका।" लोग एक साथ चिल्ला उठे। इसी समय भीड़को चीरती हुई न जाने कहांसे श्रीमती शास्त्री आगई और बोली, "यह सब झूठ है। यह मेरा पुत्र है। मैं चांडाल हूं, अतः यह भी चांडाल है। परमात्मा उसे क्षमा करें।"

"मारो मारो !" सब चिल्लाने लगे। पिता-पुत्र प्राण बचानेके लिए उस भयंकर भीड़से भाग खड़े हुए।

अब वे एक विशाल और सुंदर मंदिरके सामने आगये। सुख-दुःख-को तुच्छ समझता हुआ बड़ी शानके साथ मंदिरका शिखर आकाशको चूम रहा था; पर था वह करुणासे पूरित।

"परमपिता" जगदीश शास्त्रीने अधीर होकर कहा—"तू जातियोंका आधार और दुखियोंका रक्षक है। मेरे और मेरे प्रिय पुत्रके ऊपर एक दैवी अभिशाप आ टूटा है। नाथ, क्या तू एक पतित चांडालको अपना दर्शन देसकता है?"

"चले जाओ, निर्भय चले जाओ। मैं ही पिता हूं और मैं ही माता हूं। पतितसे भी पतित प्राणी मेरी शरणमें आसकता है," अंदरसे आवाज़ आई।

"धन्य! सुध तो ली" जगदीश शास्त्रीने अधीर होकर कहा और लड़केका हाथ पकड़कर मंदिरके ऊंचे और विशाल फाटकके अंदर दौड़े चले गये। देदीप्यमान देव-मूर्तिके सामने साष्टांग गिरकर वे दोनों प्राणी भक्ति-रसमयी प्रार्थना करते-करते प्रेम-विह्वल होगये। आनंद-पुलकित होकर वे खड़े ही हुए थे कि एक कृष्णकाय पुजारी लाल-पीली आंखें दिखाता आ पहुंचा और चिल्लाने लगा। 'चांडाल हैं-चांडाल हैं,' 'अपवित्र कर दिया,' 'मारो, जाने न पावे'—आदि शोर करती हुई, दालानमें भरी भीड़ लड़केको पीटने लगी।

वृद्ध शास्त्रीने विरोध करते हुए कहा—"हम यों ही नहीं चले आये, स्वयं भगवानने हमें बुलाया था।"

"झूटा कहींका!" लोगोंने जोरसे कहा और फिर मार पड़ने लगी। "बूढ़ेको छोड़ दो—वह ठीक है। इस हरामजादे लड़केको मार डालो।"

"मेरे प्राण लेलो, मेरे प्यारे बेटेकी जान बचादो। हाय! वह बेचारा मार डाला जायगा," अभागे पिताने हांफते हुए कहा।

जगदीश शास्त्री कांपते हुए अपनी जगह पर बैठ गये। टिकट चेकर-ने उनकी पीठ पर थपकी देकर उन्हें जगा दिया था। "अपना टिकट दिखाओ," उसने कहा। थर-थर कांपते हुए वृद्ध शास्त्रीने चारों ओर देखा और जब उन्हें विश्वास होगया कि यह सब स्वप्नकी बात थी और रामचंद्र अभी इंग्लैंडमें सुरक्षित है, तब कहीं उनके जी-में-जी आया।

उपसंहार

रामचंद्र आजकल कुर्नूलमें असिस्टेंट कलेक्टर है। शास्त्रीजीकी भागी हुई पत्नीने जो रहस्यपूर्ण बातें बताई थीं, उनकी खबर सीतारामैयर तक नहीं पहुंची। पूर्व-योजनाके अनुसार विवाह कर दिया गया। सब लोग आश्चर्यमें थे कि आखिर वृद्ध शास्त्रीका क्या हुआ? कुछ कहते थे कि धार्मिकताके जोशमें वह काशी चले गये और वहां सन्यास ले लिया। दूसरे लोगोंका कहना था कि उन्हें ज़ोरका ज्वर आया और उसीमें चल बसे।

७

देवसेना

१

होटलमें जलपान करके मोटरमें बैठते हुए रामनाथ ऐयरने अपनी पत्नीसे पूछा—"समुद्र किनारे चलें?"

सीतालक्ष्मीने मुस्कराकर उत्तर दिया—"किसी ऐसी जगह चलिए जहां भीड़-भाड़ न हो। भीड़में मुझे अच्छा नहीं लगता'' 'वहां देखिए खिलौने बिक रहे हैं। खिलौनेवाला आजाय तो बच्चोंके लिए दो-चार ले लें।"

सीतालक्ष्मीने यह कहा ही था कि खिलौनेवाला मोटरके पास आगया। उसके दिलकी बात न जाने कैसे खिलौनेवालेको मालूम होगई। पति-पत्नी-ने मोटरमें बैठे-बैठे ही खरीदारी शुरू करदी। खिलौने पसंद किये जा रहे थे और उनके दाम तय हो रहे थे।

मोटरकी दूसरी ओर एक भिखारिन युवती अपने नन्हें बच्चेको गोद-में लिये करुणस्वरमें कह रही थी—"महाराज धर्म कीजिए, नन्हा बच्चा है मां—"

रामनाथ ऐयरने उसकी आवाज़ न सुन खिलौनेवालेसे कहा—"सभी खिलौने जापानी हैं न ?"

खिलौनेवालेने उत्तर दिया—"जी हां, सभी जापानी हैं, और क्या ? ऐसे खिलौने हमारे यहां बनते कहां हैं ?"

भिखारिनने फिर गिड़-गिड़ाकर प्रार्थना की। सीतालक्ष्मीने त्यौरी चढ़ाकर कहा—"सौदा खरीदते वक्त यह क्या आफत है ? इस शहरमें भिखारियोंकी बड़ी भरमार है।"

भिखारिन कह रही थी—बड़ी भूख लगी है मां ? आंख उठाकर देखो, भगवान भला करेगा।

सीतालक्ष्मीने डांटा—जायगी या पुलिस बुलाऊं ?

भिखारिनने अपनी बिनती जारी रखी—"बच्चेको दूध भी नहीं मिला है, कबसे बिलख रहा है। एक पैसा दे दो माई ! कितने ही तो खर्च होरहे हैं, महारानी !"

रामनाथने खरीदे हुए खिलौनोंको मोटरमें संभाल कर रखते हुए ड्राइवरसे कहा—"समुद्रके किनारे चलो।"

गाड़ी चली। भिखारिन 'महाराज ! महाराज !!' कहती कुछ दूर तक गाड़ीके पीछे दौड़ी।

रामनाथने खिड़कीसे झांककर कहा—"दौड़ो मत, मर जाओगी।"

उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि भिखारिनको उन्होंने कहीं देखा है। मोटर तेजीसे चलने लगी। रामनाथने स्त्रीसे कहा—"शक्ल देखनेसे तो यह भिखारिन अपने गांवकी मालूम पड़ती है।"

उसकी स्त्रीने उत्तर दिया—"किसी भी गांवकी हो, होगी कोई चुड़ैल। हमें इससे क्या मतलब। जरा सामने देखना, वह खिलौना कैसा है ? अहा ! एरोप्लेन है। देखिए तो चाबी वाला है या मामूली ?"

इसी तरह बाजारमें तरह-तरहके खिलौने देखते दोनों समुद्रके किनारे पहुंच गये।

२

सलेममें गरीब जुलाहोंका एक घर था। दयापुरीकी उम्र तीस वर्ष थी और उसकी बहन देवसेनाकी २० वर्ष। दोनों अपनी मांके साथ गरीबीकी ज़िंदगी बिताते थे। उनके सम्मिलित परिश्रमकी कमाई चार रुपये हफ्तेसे अधिक न थी। कई सालसे करघेका काम ठंडा पड़ता जा रहा था। मजदूरी घट रही थी। यहांतक कि बहुतसे लोग बेकार होगये थे। दयापुरीके कर्घे भी बेकार पड़े थे। देवसेना अपने भाई तथा माताकी उदर-पूर्तिके लिए मुहल्लेके दो ब्राह्मण अफसरोंके घर चौका-बर्तन करती थी। उसे तीन रुपये मासिक मिल जाते। एक दूसरे घरमें इसी तरहका काम करके उसकी मां भी एक रुपया महीना कमा लेती थी। दयापुरी नौकरीके लिए करघोंके मालिकोंके पास भटकता फिरा; परंतु जब उसे कोई काम न मिला तो घरवालोंसे विदा लेकर बंगलोर चला गया। किसी मिलमें नौकरी मिल जानेकी आशासे मुहल्लेके दो-चार और नवयुवक उसके साथ हो लिये।

कुछ दिनों बाद उसका पत्र आया कि बड़ी दौड़-धूपके बाद उसे एक मिलमें नौकरी मिल गई है। दयापुरी कुछ लिखना-पढ़ना भी जानता था। लड़कपनमें उसके बापने उसे मुहल्लेकी पाठशालामें भरती करा दिया था। उन दिनों जुलाहोंकी दशा ऐसी दयनीय न थी।

मुहल्लेके एक लड़केने दयापुरीकी मांको उसके पुत्रका पत्र पढ़कर सुनाया—"गली-गलीकी खाक छानने और न जाने कितने लोगोंकी मुट्ठियां गरम करने तथा खुशामदोंके बाद मुझे एक मिलमें नौकरी मिल गई है। आठ आने प्रतिदिन मजदूरी मिलती है। इनमें चार इतवार कट जायंगे। इस तरह सिर्फ तेरह रुपये मिलेंगे। अगले महीनेसे तुम लोगोंके खर्चके लिए रुपये भेज दिया करूंगा। आगे ईश्वर मालिक है।"

बुढ़िया और देवसेनाको बड़ी खुशी हुई।

पंद्रह दिन बाद दयापुरीका एक और पत्र आया। उसमें लिखा था—"यहां मिलके काममें मेरा मन नहीं लगता। जब मुझे उन

दिनोंकी याद आती है, जब अपने घरमें बैठकर काम करता था, तब मेरे दिलको बड़ी चोट लगती है और आंसू पीकर रह जाता हूं, सिरमें चक्कर आ जाता है। किसी तरह दिल नहीं लगता। न जाने मैं अपना गांव छोड़कर क्यों चला आया। पड़ोसके लड़केसे लिखवाकर पत्रका उत्तर अवश्य देना।"

३

देवसेना जिन दो घरोंमें काम किया करती थी उनमेंसे एक घर एक गवर्मेंट पेंशनरका था। उसकी पत्नी काम लेनेमें तो अवश्य कड़ी थी; परंतु दूसरी बातोंमें बड़ी नेक और रहमदिल थी। उसने देवसेनाको अपनी पुरानी धोती दी। वह रसोई घरकी बची हुई चीजें—भात, कढ़ी, पापड़ और खीर भी उसे दिया करती थी। इस तरह कितने ही दिन गुजर गये।

परंतु शायद ईश्वरसे देवसेनाका यह सुख देखा न गया। रसोइया जो देवसेनाको बचा हुआ भोजन दिया करता था, उससे हंसी-मजाक करने लगा। एक दिन उसने छेड़खानी भी कर दी। देवसेनाकी आंखोंमें खून उतर आया, परंतु उसने लज्जावश यह बात किसीसे न कही। घर जाकर उसने अपनी मांसे कहा—"आज मैं उस नीमके पेड़वाले घरमें काम करने न जाऊंगी।

जब मांने कारण पूछा तो उसने बड़ी मुश्किलसे सारी बातें बताईं। बुढ़ियाने कहा—"मैं सारी बातें घरवालोंसे कहूंगी।"

देवसेना बोली—"नहीं मां, अब कहने-सुननेसे फायदा ही क्या है ?"

और जगह नौकरी ढूंढ़ी गई, परंतु सफलता न मिली। अंतमें दो महीनेकी बेकारीके बाद एक घरमें कुछ काम मिला।

इधर दयापुरीको बंगलोरमें छः महीने बीत गये। वह जिस मिलमें काम करता था, उसमें हड़ताल हुई। साहबने किसी मिस्त्री पर हाथ चला दिया था। इसके बाद वह मिस्त्री और कुछ मजदूर कामसे हटा दिये गये। इसलिए मजदूर-संघने मामलेको हाथमें लिया और तय किया कि इस

महीनेकी तनख्वाह मिलते ही हड़ताल कर दी जाय। दयापुरीको भी इस हड़तालमें शामिल होना पड़ा।

एक महीने तक हड़ताल खूब जोर-शोरसे चली। मजदूरोंकी सभायें होती रहीं और शहरमें खूब हलचल रही; परंतु अंतमें जब मजदूरोंके पास पैसोंकी कमी होगई तो उनका जोश भी ठंडा पड़ गया। आखिरमें कुछ सरकारी अफसरोंने आकर सुलह करादी और मिलका काम चलने लगा।

एक सप्ताह बाद मिलके दरवाजे पर नोटिस लगा कि, "पच्चीस मजदूर मिलसे हटा दिये गये। वे अब मिलके अंदर न आवें।" इन निकाले गये मजदूरोंमें दयापुरीका नाम भी था। उसने अपने सरदारसे कहा—"मैंने क्या अपराध किया? मैं तो किसी बातमें शामिल ही न था।"

सरदारने कहा—साहबका हुक्म है। यह सब टाइमकीपर रंगास्वामी नायरकी शरारत है। उसीने तुम्हारा नाम भी लिखकर साहबके पास भेज दिया।

रंगास्वामीके पास जाकर दयापुरीने प्रार्थना की; अपनी निर्दोषिता और गरीबीकी दुहाई दी और खुशामदें की। रंगास्वामीने कहा—भाई, मैं कुछ नहीं जानता; यह तनख्वाह बांटनेवाले गुमाश्तेकी शरारत है।

तात्पर्य यह कि प्रत्येक व्यक्तिने बात दूसरे पर टाली। दयापुरी एक-एक करके सबके पास गया; परंतु कहीं उसकी सुनाई न हुई। मैनेजरने कहा, "तुम लिखना-पढ़ना जानते हो। तुमने लोगोंको भड़काया है। हम तुम्हें कभी भी काम पर नहीं ले सकते।"

कई दिनों तक घूम-फिरकर हाथके पैसे समाप्त कर, न जाने कितनी तकलीफें उठाकर दयापुरी मद्रास आया। उसके साथ दस और मज़दूर थे, जो मिलसे निकाले गए थे। उन्होंने अपने पैसोंको आपसमें बांटकर खानेका खर्च निकाला और आठ दिनतक इधर-उधर भटकते रहे।

अंतमें दयापुरीको मिलमें नौकरी मिली। गेट-कीपर तथा छोटे-मोटे अफसरोंको चांदीकी गोली खिलानेमें पांच रुपये स्वाहा होगए। दयापुरीने अपने सोनेके कुंडल गिरवी रखकर कुछ रुपये उधार लिए। इससे अपने

खाने-पीनेका खर्च चलाने लगा और अपने साथियोंका भी ऋण चुका दिया। कुछ दिन बाद ग़म गलत करनेके लिए दयापुरीने शराब पीना आरंभ किया। सलेममें उसे यह आदत न थी। फिर कुछ यारोंने जुएका रास्ता दिखाया—और उसे आसानीसे मालदार बनजानेकी तरकीब बताई। मजदूरीसे खाने-पीने का खर्च तथा अन्य खर्च पूरा करनेके बाद जो रकम बचती थी वह गांव भेजनेके बदले शराब और जुएमें लगती। पठानका सूद भी बराबर बढ़ता जाता था। इन परेशानियोंसे तंग आकर दयापुरीने और भी अधिक मात्रामें शराब पीना आरंभ कर दिया।

पहले तो इधर-उधरकी बातें बनाकर वह घरवालोंको टाल देता था। अंतमें उसने लिख दिया कि "मैं खर्चके लिए कुछ नहीं भेज सकता। अगर देवसेना चाहे तो यहां आकर किसी मिलमें नौकरी कर सकती है। मैं उसे नौकर रखा दूंगा।" पत्र पढ़कर देवसेना और उसकी मांको बड़ा दुःख हुआ। कुछ दिन सब्र करने पर देवसेनाने एक दिन कहा—"मैं मद्रास ही क्यों न चली जाऊं? भाईके साथ काम करके दो-चार पैसे कमा लिया करूंगी और तुम्हारे लिए भेज दिया करूंगी। सुना है मद्रासमें बहुत लड़कियां मिलमें काम करती हैं।"

पहले तो मांने बहुत इंकार किया; परंतु अंतमें देवसेनाके हठ करने पर राजी होगई। घरके बर्तन आदि एक पड़ोसीके यहां गिरवी रख बारह रुपये उधार लिए और देवसेना मद्रास के लिए रवाना हुई।

दयापुरी जिस मिलमें काम करता था वहां तो देवसेनाको काम न मिल सका; परंतु एक दूसरी मिलमें सूत कातनेके काममें उसने देवसेना-को लगा दिया। इस मिलमें डेढ़ सौके करीब छोटी-मोटी लड़कियां काम करती थीं। देवसेना और उसके साथ काम करनेवाली दस लड़कियों पर एक मेट था। पहले तो वह देवसेनाके साथ भलमनसाहतका बर्ताव करता रहा; परंतु अंतमें उसने डांट-डपट शुरू की। पर जब कभी देवसेना एकांत-में उसे मिलती तो उसके साथ प्रेमकी बातें करता।

देवसेनाने अपने साथ काम करने वाली एक स्त्रीसे पूछा—“क्या बात है ? वह मुझसे इस तरहकी बातें क्यों करता है ?”

उस स्त्रीने मुस्कराकर कहा—“तुम तो जैसे कुछ जानती ही नहीं, बच्ची हो। अगर तुम उसके इशारोंपर न चलोगी तो आधी मजदूरी जुर्मानेमें कट जायगी; लेकिन अगर वह खुश रहे तो जो सुविधा चाहो मिल जायगी।”

ग़रीबोंको पूछता ही कौन है ? फिर जो ग़रीब लड़कियां मिलोंमें काम करती हैं, वे तो पिछले जन्मकी अपराधिनी हैं।

देवसेनाने पहले तो सब बातें सहीं; परंतु अंतमें उसने उलझना बेकार समझा और उसके साथ प्रसन्नताका व्यवहार करने लगी। प्रतिदिनकी बातों में आनंद आने लगा और उसकी तनख्वाह भी बढ़ गई।

* * * *

कई महीने बीत गये। देवसेनाके शरीरमें परिवर्तन के चिन्ह दिखाई देने लगे। मालूम हुआ कि उसके पैर भारी हो रहे हैं। उसने सारे देवताओंकी मिन्नतें मानी, जंगलमें शिकारीसे बचनेवाली हरिणीकी तरह वह व्याकुल और चौकन्नी होगई। भाईसे यह बात कहते उसे भय मालूम हुआ। साथिन स्त्रियां उसकी यह दशा देख उसकी हंसी उड़ाने लगीं। उसने घर लौट जानेका इरादा किया; साथ ही भय हुआ कि गांववाले बिरादरीसे निकाल देंगे। उसकी माता भी यह अपमान किसी तरह बर्दाश्त न कर सकेगी। उसने गांव जानेका इरादा छोड़ दिया और ईश्वरके भरोसे रहकर मिलमें काम करने लगी।

एक दिन एकाएक वह घबरा गई और खूब रोई। “हाय मैं क्या करूं ? मैंने अपने कुलको कलंकित कर दिया।”

उसके साथ काम करनेवाली एक स्त्री बोली—“घबराओ मत देवा ! यह तो सब पर घटती है। इसके लिए दवा है, उससे आराम हो जायगा।”

“हां, मैंने सुना है; परंतु मुझे डर लगता है कि कहीं मर तो नहीं जाऊंगी ! हे ईश्वर ! मुझे छिपनेके लिए कोई जगह बताओ।”

"दो रुपये दो तो पासकी गलीमें एक स्त्री है, वह सब कुछ ठीक कर देगी।"

"परंतु अगर कहीं पुलिसको खबर लग गई तो क्या होगा?"

"इससे डरनेकी कोई जरूरत नहीं, उस स्त्रीका पुलिससे मेल-जोल है। तुम तो जानती हो कि रुपयेसे सब कुछ हो सकता है।"

"हाय! मैं रुपयेके लिए कहां जाऊं? हे ईश्वर! दया करो प्रभो! मैं इस गंदी जगहमें आई ही क्यों? अच्छा होता, अगर मैं वहीं सलेममें भूख-प्याससे तड़प-तड़प कर मर जाती।"

कुछ दिनों बाद एक दूसरी स्त्रीने सलाह दी—"बच्चेका खून नहीं करना चाहिए। कहते हैं, यह पाप तीन जन्म तक नहीं मिट सकता। गणेश-मंदिरकी गलीमें एक बुढ़िया रहती है। अच्छे विचारकी है। उसके पास चली जाओ। वह सब काम ठीक कर देगी। तुम्हारी तरह कितनी ही स्त्रियोंने वहां जाकर प्रसव किया है। तुम घबराओ नहीं!"

देवसेनाको थोड़ा-सा सहारा मिला। वह अपनी एक साथिनको लेकर गणेश-मंदिरवाली गलीमें गई। वहां सब सामान ठीक होगया। देवसेनाके बच्चा पैदा हुआ। बच्चेको देखते ही देवसेना अपनी सारी व्यथा भूल गई।

वह बच्चेको दूध पिलाती हुई कहती थी—यह ईश्वरकी देन है। इस बेचारेने क्या बिगाड़ा है। मैं ही कलंकिनी हूं।

गणेश-मंदिर वाली बुढ़िया देवसेनासे कहती, "तुम अभी काम पर मत जाओ। कुछ रोज और आराम करो।"

एक महीने बाद भेद खुला। जिस स्त्रीको देवसेना दयाकी देवी समझती थी, वह वास्तवमें एक बदमाश औरत थी और भोली लड़कियोंको अपने जालमें फंसाकर उनसे दुष्कर्म कराती थी।

इसके बाद देवसेना फिर कभी मिलमें काम करने नहीं गई।

४

रामनाथ एय्यरने अपनी पत्नीसे कहा—"सलेममें अपने घर काम

करने वाली देवसेनाको क्या तुम नहीं जानतीं ? इस भिखरिनकी सूरत उससे मिलती-जुलती है।"

रामनाथ वास्तवमें उसी पेंशनरके पुत्र थे, जिसके यहां देवसेना नौकरी करती थी। उस वक्त वह मद्रासके एक बैंकमें खजांची थे।

सीतालक्ष्मी बोली, "सलेमवाली लड़की भला यहां क्यों आने लगी ?"

"खैर वह न सही, कोई भी हो, मैं सोचता हूं कि इस अभागे देश-की क्या हालत होगी, जहां नवयुवतियां इस प्रकार बच्चा गोदमें लिये भीख मांगती फिरती हैं!"

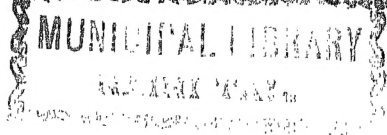
दूसरे दिन भी रामनाथके दिलसे भिखारिन का खयाल दूर नहीं हुआ। शामको ऑफिससे छुट्टी मिलने पर सीधे चीना बाजार चले गये। उस भिखारिनसे मिलकर उससे दो बात कर लेना चाहते थे। इसलिए उन्होंने होटलके पास मोटर रोकी और बड़ी देर तक राह देखते रहे। उन्हें कई भिखारियोंने 'महाराज! महाराज' कहते हुए घेर लिया, परंतु उनमें वह भिखारिन नहीं थी, जिसे वह ढूंढ़ रहे थे।

दूसरे शनिवारकी शामको रामनाथ और उनकी स्त्री दोनों फिर चीना बाजारकी ओर चले। एकाएक सीतालक्ष्मीने कहा, "वह देखिए आपकी भिखारिन है।"

बच्चेको गोदमें लिए, और 'मां एक पैसा देदो' कहती हुई वह दूसरी मोटरकी ओर दौड़ी जा रही थी। रामनाथको देखकर शायद वह समझ गई थी कि ये कुछ देनेवाले नहीं है, इसीलिए वह उनकी मोटरकी ओर नहीं आई।

रामनाथको उसे पुकारनेमें संकोच मालूम हुआ। कुछ देर तक वे चुपचाप खड़े रहे। उन्हें आशा थी कि शायद वह इधर आयेगी; परंतु वह भीड़में कहीं गायब होगई।

आठवें दिन रामनाथ और सीतालक्ष्मी सिनेमा देखने गये; पर वहां भीड़ थी। लोगोंने कहा—[illegible]के तमाम टिकट बिक चुके हैं, आप दूसरे में जा सकते हैं।



रामनाथ सोच रहे थे कि अब क्या करना चाहिए; इतनेमें एक भिखारिनने मोटरके पास आकर आवाज दी, 'महाराज, भीख !' रामनाथने मुंह फेरकर देखा वही सलेमवाली भिखारिन थी।

सीतालक्ष्मीने मोटर-ड्राइवरसे कहा—"यहां मोटर रोकनेसे भिखारी तंग करेंगे। चलो वापस घर चलो।"

इसी समय पुलिसके सिपाहीने भिखारिनको मार भगाया।

उसी रातको रामनाथने भिखारिनको स्वप्नमें देखा। उन्होंने पूछा—"तुम किस गांवकी रहनेवाली हो ? तुम्हारा नाम देवसेना तो नहीं है ?"

भिखारिनकी आंखोंमें प्रसन्नता झलक उठी। वह बोली—"महाराज, आप सलेमके ही रहनेवाले हैं ?" उन्होंने उसे अपनी मोटरमें बिठा लिया। घर पहुंचने पर उनकी स्त्रीने कहा, "इस चुड़ैलको क्यों लाये ?"

उन्होंने उत्तर दिया—"इसे अपने घरमें क्यों न रखलें। चार रुपया महीना और भोजन दिया करेंगे।"

"खूब सोचा आपने। दुनिया-भरके निकम्मोंको अपने घरमें लाकर रखेंगे। वाह, क्या अक्लमंदी है! चलो इसे निकालो बाहर।"

भिखारिनने कहा—"मां, मैं चोरी नहीं करूंगी और आप जो काम चाहेंगी, करूंगी।"

सीतालक्ष्मी बोली—"तू कोई काम नहीं कर सकती। चल, निकल बाहर।"

भिखारिनको एक रुपया देनेके लिए रामनाथ जेबें टटोलने लगे; मगर इत्तिफाकसे कुछ न निकला। इतनेमें भिखारिनका बच्चा ज़ोरसे रो पड़ा। रामनाथकी आंख खुल गई। बिस्तर पर उनकी बच्ची रो रही थी।

"खैर, सीतालक्ष्मी इतनी कठोर नहीं हो सकती। यह स्वप्न ही तो है।" यह कहकर रामनाथने संतोषकी सांस ली।

इसके बाद रामनाथने भिखारिनको बहुत ढूंढ़ा; परंतु वह न मिली। न जाने वह कौन थी और कहां चली गई ?
